भूमिका

प्रिय काव्यरसिकवृन्द !

संस्कृत वा हिन्दी भाषा में एक से एक बढ़कर काव्य ग्रन्थरूपी रत्न भरे पड़े हैं और उमंग में आकर कवियों ने अपनी अपनी बुद्धि का विशेष चमत्कार प्रदर्शित किया है। नवों रसों के वर्णन मेंभी कमाल किया है यह बात तो निर्विवाद है कि नवों रसों में शृंगाररसही प्रधान है जिसके देवता साक्षात विष्णु भगवान हैं कहा भी है " अलंकार प्रियो विष्णुः " और उन्हीं के अष्टमावतार श्रीकृष्ण परमात्मा हैं उन्हीं का और उनकी परमप्रिया श्रीराधिका महारानी का अवलंबन लेकर कवियों ने काव्य में अद्भुत चमत्कार प्रगट किया है धन्य है सूरदास तुलसीदास, केशवदास जयदेव, देव, पद्माकर, मतिराम, बिहारीलाल, भिखारीदास, रसलीन, रसखान प्रभृति सत्कवियों को जो संसार में अनुपम काव्यामृत का प्रवाह कर अपना शुभनाम सर्व्व काल के लिये अमर कर गये हैं।

शृंगाररसांतर्गत नायिका भेद परम मनोरंजक विषय है परन्तु कतिपय विद्वान नायिका भेद को क्रूर दृष्टि से देखते हैं यह उनकी भूल है क्या संस्कृत और क्या प्राकृत काव्य ग्रंथों में नायिका भेदकाही प्राधान्य है। नायिका भेद केवल वाग्विलास है इससे मनुष्य सावधान होकर कार्य्य कुशल और सभाचतुर होता है यह बात अवश्य ध्यान रखने योग्य है कि जहां तक सरस वाग्व्यापार है वहीं तक नायिका भेद है व्यभिचार में प्रवृत्त होना वा कराना कदापि नायिका भेद का अभीष्ट नहीं है।

नायिका भेद का ज्ञाता होकर मनुष्य अनेक बुराइयों से बचकर सावधान हो जाता है हां कथन में कोई बात मर्य्यादा के बाहिर न होनी चाहिये अश्लीलता से अवश्य बचना चाहिये क्योंकि अश्लीलता नितांत नीरस है और सभ्य समाज में कभी आदर नहीं पा सकती। संस्कृत के प्राचीन शास्त्रकार परम विद्वान और दूरदर्शी थे उन्हीं के आश्रय से भाषा के कवियों नेभी अपना काव्य कौशल दिखाया है। कतिपय संस्कृत साहित्यकारों ने नायिका के भेदोप भेदलिखे हैं परन्तु भाषाके कवि नायिका के भेदोपभेद लिखने में उनसे भी कई कदम आगे बढ़गये हैं संसार में उन्होंने जितनी [illegible] देखीं उन सब के [illegible] एक भेद बनाकर रखदिये इस बात का विचार न किया कि मर्य्यादा के बाहर भेदोपभेद करने में समाज पर क्या

प्रभाव पड़ेगा लोग नायिका भेद को किस दृष्टि से देखेंगे साधारण भेदों के अतिरिक्त अनेक भेदोपभेद करने में कवि सैयद गुलामनबी बिलग्रामी रसलीन बहुत बढ़कर हैं। यथा—

मुग्धा में—अंकुरित यौवना, सैसवयौवना, नवयौवना, दरघातयौवना नवलअनंगा, अविदितकामा, नववधू।

मध्या में—उन्नतयौवना, उन्नतकामा, प्रगल्भवचना, सुरतविचित्रा, लघु लज्जा।

प्रौढ़ा—उद्भटयौवना, मदनमाती, लब्धा, रतिकोविदा, रति प्रिया, आनंदाति सम्मोहिता।

प्रत्येक का सुरतारंभ और सुरतांत, विपरीत रति, शयन, पति दुःखिता, वालपति दुःखिता, वृद्ध पति दुःखिता, परकीया में साध्या, असाध्या, सभीता, गुरुजन सभीता, दूतिवर्जिता, अतिक्रान्ता, खलपृष्ठा, वृद्धवधू वालवधू, नपुंसकवधू, विधवावधू, गुणीवधू गुणरिझवती, सेवकवधू, निरंकुशा, उद्भूता, उद्भूदिता इत्यादि कहां तक गिनावें इन्होंने विधवावधू और सेवकवधू के भी उपभेद मानेहैं यद्यपि संसार में ऐसी लीला होती भी हो तो यह समाज का दोष है जिसके सुधारने का भार समाज पर है न कि उसके लिये एक नया नियम लिखकर नायिका भेदों में सम्मिलित कर दिया जाय। इन्हीं कई कारणोंसे नायिका भेद में एक कलंकसा लग गया है प्राचीन दूरदर्शी महात्माओं ने जो मुख्य भेद लिखे हैं वे बहुत विचार पूर्व्वक लिखे हैं वे ही आदर केयोग्य हैं। भारतवर्ष के बुंदेलखंड, बघेलखंड अवधप्रांत, बैसवाड़ा, बिहार, संयुक्तप्रांत तथा रजवाड़ों में नायिका भेदों की बहुत चर्चा रहती है यहां तक की होड़ाहोड़ी लगजाती है हार जीत की नौबत आजाती है। अमुक नायिका स्थिर करना सहज काम नहीं है इसमें बहुत बुद्धि लड़ानी पड़ती है नायिका भेद का स्थिर करना शतरंज के खेल से कम नहीं। एक एक शब्द एक एक भावपर बड़ी बारीकी से विचार करना पड़ता है अनेक कवियों ने अपनी२ उमंगसे अनेक भेदोपभेद लिखे हैं जो एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं यथार्थ में यह विषय बहुत जटिल और वाद ग्रस्त है। हमें खेद है कि काव्यप्रभाकर में जो नायिका भेद की तालिका छपी है उसके अतिरिक्त एक विधान पत्र भी छपने को भेजा था वह नहीं छपा और तालिका में भी एक स्थान पर भूल से कुछ अंक नहीं छपे और हमारा ध्यान भी इस भूल की ओर शीघ्र आकृष्ट नहीं हुआ। अनेक मतभेद होने के कारण इस विषय की शंका निवारणार्थ हमारे पास अनेक पत्र

आगे उनको अलग अलग उत्तर लिखकर समाधान करना अशक्य होगया इसलिये उनका उत्तर इसी ग्रंथ द्वारा देने का प्रयत्न किया है। इस ओर हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करने का श्रेय कविवर श्रीयुत भैय्या पन्नालाल जो गयापाल को है अतएव वे विशेष धन्यवादके पात्र हैं।

नायिका भेद प्रस्तारकी संख्या बहुत कम ग्रन्थोंमें मिलती है जहांतक मिली वहां तक पता लगाकर उनका गणित भी लिख दिया, यद्यपि काव्य प्रभाकर हमारा ही रचित है तथापि हठ वा पक्षपात छोड़कर जो भेद असाध्य थे वे सब पूर्ण विचार के साथ अलग कर दिये और सिद्धांत पर लक्ष रखते हुए कारण सहित एक अलग तालिका भी इसी ग्रन्थ में लिख दी है अर्थात् वेही भेद रखे हैं जो बहुमतानुसार साध्य और मान्य हैं। हमें आशा है कि मार्मिक काव्यरसिकजनों को इससे कुछ संतोष होगा। फिर भी अंत में यही कहना पड़ता है कि 'जो जिहि भाव नीक तिहि सोई'। नवीन पाठकों के हितार्थ व्यंग्यार्थ दर्पण और एक कोष भी सम्मिलित कर दिया है।

साहित्यानुरागी श्री प्रेमदासजी वैष्णवने भी हमें इस ग्रन्थ के अवलोकन में प्रेमपूर्व्वक सहायता प्रदान की एतदर्थ हम उनके भी कृतज्ञ हैं।

आषाढ़ एकादशी गुरुवार संवत् १९८२ — जगन्नाथप्रसाद—'भानु'
बिलासपुर।

नायिका आठ हैं वा दस?

(१) श्री देवी जी विषयक प्रकृतिखंड में अष्ट नायिका यों वर्णित हैं:—

"ततोऽष्ट नायिका देव्या यत्नतः परि पूजयेत् ।
उग्रचण्डां प्रचण्डाञ्चचण्डोग्रां चण्डनायिकाम् ।
अति चण्डाञ्च चामुण्डां चण्डां चण्डवतीन्तथा ॥"

(२) श्री जयदेव प्रणीत गीत गोविन्द में निम्नांकित अष्ट नायिका वर्णित हैं:—

१ प्रोषित पतिका
२ वासकसज्जा
३ विप्रलब्धा
४ उत्कण्ठिता
५ खण्डिता
६ कलहांतरिता
७ अभिसारिका
८ स्वाधीन पतिका

(३) कई लोग श्रीकृष्ण परमात्मा की मुख्य आठ रानियों को ही अष्ट नायिका कहते हैं परन्तु उनकी संज्ञा नायिका नहीं, पट्टरानी है ।

परम भक्त नरसी मेहताने भी नरसीमेहता-हुंडी में उन्हें पटरानी लिखा है यथा:—

आठ भई तुम्हरे पटरानी । इकतें एक अधिक मनमानी ॥
अति सुन्दर है रुक्मिणी, लक्ष्मी को अवतार ।
सतिभामा को मान है, जाम्बवती सों प्यार ॥
कालिन्दी नागिन जिती, भद्राजी सों हेत ।
मित्र बिंदा अरु लक्ष्मणा, कुल को शोभा देत ॥

(४) श्रीमद्भागवत के दशमस्कंध उत्तरार्ध के ५८वें अध्याय में भी इन आठों की संज्ञा महिषी कही गई है, नायिका नहीं ।

(५) प्रेमसागर मेंभी इनकी संज्ञा पटरानी कहीहै, नायिका नहीं ।

(६) रसमंजरी में नायिका का लक्षण यों है:—

श्रृंगाररसालम्बनविभाव रूपा नारी ।

अर्थात् जिसको देखकर हृदय में श्रृंगार रस का भाव उत्पन्न हो वही नायिका है। पद्माकरजी ने ठीकही कहा है:—

रस सिंगार को भाव उर, उपजत जाहि निहार ।
ताही को कवि नायका, बरणत विविध विचार ॥

इससे यह प्रतिपादित हुआ कि समस्त स्त्री जातिही नायिका नहीं अर्थात् छोटी कन्यायें, वृद्धा, कुरूपा, रोगिणी इत्यादि नायिका नहीं।

रसलीन जी ने भरत मत से १२ विध स्वकीया लिखकर वयानुसार उनके नाम दिये हैं। यथा:—

७ वर्ष तक	देवी
१४ वर्ष तक	देवी रीध (ऋद्धा ?)
२१ वर्ष तक	गंधर्वी
२८ वर्ष तक	मानुषी
३५ वर्ष तक	सुद्धि मानुषी

पुनः—

९$\frac{3}{4}$ वर्ष तक	गौरी लेश
१०$\frac{1}{2}$ वर्ष तक	गौरी

१२$\frac{1}{4}$ वर्ष से २४$\frac{1}{2}$ तक लक्ष्मी
२४$\frac{1}{2}$ से ३५ वर्ष तक सरस्वती

पुनः—

मुग्धा	मध्या	प्रौढ़ा
५	४	४
१ अंकुरित यौवना ऋतुसे तीन मास तक	१ आरूढ़ यौवना	१ लब्धा २१ वर्ष
२ नवल वधू छै मासतक	२ प्रगल्भ वचना १९ वर्ष	२ रति कोविदा २२ वर्ष
३ नवयौवना १४ वें वर्ष	३ प्रादुर्भूत मनोभवा	३ वल्लभा २३ वर्ष
४ नवलअनंगा १५ वर्षतक	४ सुरतविचित्रा २० वर्ष	४ सुभ्रमा २४$\frac{1}{2}$ वर्ष
५ सलज्जरत १६ वर्ष तक	(ग्रंथ में नं १ और ३ छूट गये हैं)	

पुनः—

७ वर्ष तक	कन्या
१३ वर्ष तक	गौरी
२३ वर्ष तक	तरुणी
४० वर्ष तक	प्रौढ़ा

वय की जांच परताल तो विचित्र है तथापि संज्ञायें अवश्य कवियों के काम की चीज हैं। परन्तु बहुमत से ८ के बदले १० त्रिधनायिका मानना ही समुचित है। अर्थात्:—

१ प्रोषित पतिका	६ वासकसज्जा
२ खडिता	७ स्वाधीनपतिका
३ कलहांतरिता	८ अभिसारिका
४ विप्रलब्धा	९ प्रवत्स्यत्पतिका
५ उत्कंठिता	१० आगत पतिका

इनका वर्णन आगे किया जायगा:—

अब इसके आगे प्रत्येक ग्रंथकार का मत और उसके गणित का वर्णन करते हैं।

रसिक प्रिया ।

केशवदास सो तीन विधि, बरणी सुकिया नारि।
परकीया द्वै भांति पुनि, आठ आठ अनुहारि ॥
उत्तम मध्यम अधम अरु, तीन तीन विधि जानि ।
प्रकट तीनसौ साठ तिय, केशवदास बखानि ॥

(१) स्वकीया—	१ मुग्धा के ४	नवलबधू	१
		नव यौवना	१
		नवल अनंगा	१
		लज्जा प्राय	१

२ मध्या के ४	आरूढ़ यौवना	१
	प्रगल्भवचना	१
	प्रादुर्भूत मनोभवा	१
	सुरत विचित्रा	१
३ प्रौढ़ा के ४	समस्तरति कोविदा	१
	विचित्र विभ्रमा	१
	आक्रमति	१
	लुब्धा	१

(इस ग्रंथ में ज्येष्ठा कनिष्ठा का वर्णन नहीं है, पद्मिन्यादि भेद लिखकर भी गिन्ती में नहीं लिये) १२

(२) परकीया	ऊढ़ा	१	
	अनूढ़ा	१	२
(३) सामान्या	...	...	१
		कुल	१५

१५×८ भेद=१२०×३ (उत्तमा, मध्यमा, अधमा)=३६०

रसिकप्रिया में नायिका के दशविध भेदों में से ८ ही माने हैं। प्रवत्स्यत्पतिका और आगतपतिका का उल्लेख नहीं है। अर्थात्—

मुग्धा	९६
मध्या	९६
प्रौढ़ा	९६
परकीया	४८
सामान्या	२४
कुल	३६०

रसिकप्रिया के टीकाकार सरदार कवि ने ३६० भेदों से संतुष्ट न होकर विचित्र गणित किया है। यथाः—

धीरादि ३ × २ ज्ये. क.=६×२ मध्या, प्रौढ़ा=१२

१२ + ३ स्वकीया + १ मुग्धा = १६

१६ × ८ दशाभेद = १२८

१२८ × ८ दशाभेद = १०२४

\+ ४

१०२८

१०२८ × ३ उत्तमादि = ३०८४

३०८४ × ३ स्त्रियादि = ९२५२

आपने पद्मिन्यादि ४ भेद कृपा करके छोड़ दिये यदि लेते तोः—

९२५२ × ४ = ३७००८ भेद होते ।

इनका ९२५२ का गणित समझ में नहीं आता, दो बार ८ से गुणा क्यों किया गया कदाचित् परकीया के भेद लिये हों पर सामान्या के भेद लिये वा नहीं इसका पता नहीं तिसपर भी छापे की भूल से ३०८४ के ३०३०८४ और ९२५२ के ११०५२ छप गये हैं ।

नायक भेद

रसिकप्रिया में पति के केवल ४ भेद मिलते हैं अर्थात् अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट और शठ । अन्य कोई भेद का उल्लेख नहीं है ।

साहित्य दर्पण ।

साहित्य दर्पण में नायिका के सोलह भेद माने हैं अर्थात्—

स्वकीया में	मुग्धा	१
मध्या में	१ ज्येष्ठा धीरा	
	२ ज्येष्ठा अधीरा	
	३ ज्येष्ठा धीराऽधीरा	
	४ कनिष्ठा धीरा	
	५ कनिष्ठा अधीरा	
	६ कनिष्ठा धीराऽधीरा	६

प्रौढ़ा में	१ ज्येष्ठा धीरा	
	२ ज्येष्ठा अधीरा	
	३ ज्येष्ठा धीराऽधीरा	
	४ कनिष्ठा धीरा	
	५ कनिष्ठा अधीरा	
	६ कनिष्ठा धीराऽधीरा	६
परकीया कन्यका (अनूढ़ा)		१
परोढ़ा (ऊढ़ा)		१
सामान्या (गणिका)		१
		१६

अवस्थाभिर्भवन्त्यष्टावेताः षोडश भेदिताः ।

१६ × ८ (अवस्था भेद-१० भेदों में से प्रवत्स्यत्पतिका और आगतपतिका को छोड़कर) = १२८×३ (उत्तमा, मध्यमा, अधमा) = ३८४। इस ग्रंथकार ने-दिव्यादिव्य भेद नहीं माने हैं। यथाः—

मुग्धा	१ × ८ × ३	=	२४
मध्या	६ × ८ × ३	=	१४४
प्रौढ़ा	६ × ८ × ३	=	१४४
परकीया	२ × ८ × ३	=	४८
सामान्या	१ × ८ × ३	=	२४
			३८४

नायक भेद

सा० द० में पति का केवल एक भेद माना है। उपपति और वैशिकका उल्लेख नहीं है। पति के उपभेद ४ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट और शठ×४ धीरललितादि = १६ × ३ उत्तम, मध्यम और अधम = ४८

* धीरललितादि भेद कौन से हैं ?

१ धीरोदात्त	जैसे	राम, युधिष्ठिरादि
२ धीरोद्धत	जैसे	भीमसेनादि
३ धीरललित	जैसे	वत्सराजादि
४ धीरप्रशान्त	जैसे	मालती माधव में माधव

* सू०-इन भेदों का प्रयोजन नाटक में पड़ता है।

रस मंजरी।

रसमंजरी में साहित्यदर्पणानुसार ही नायिका के २८४ भेद मानकर उनको दिव्य, अदिव्य, दिव्याऽदिव्य इन तीन उपभेदों से गुणित कर कुल ११५२ भेद लिखे हैं। यथाः—

मुग्धा	१ × ८ × ३ × ३ = ७२
मध्या	६ × ८ × ३ × ३ = ४३२
प्रौढ़ा	६ × ८ × ३ × ३ = ४३२
परकीया	२ × ८ × ३ × ३ = १४४
सामान्या	१ × ८ × ३ × ३ = ७२
	११५२

इस ग्रंथ में ज्येष्ठा कनिष्ठा का वर्णन होते हुए भी गिन्ती में नहीं लिया है और १० विध्रनायिका वर्णन होते हुएभी केवल ८ ही भेद गिन्तीमें लिये हैं।

नायक भेद

इस ग्रंथ में नायक भेद यों मिलते हैंः—

(१) पति—अनुकूल, दक्षिण, धृष्ठ, शठ

शठ — मानी, चतुर = ५ मुख्य

५ प्रोषित
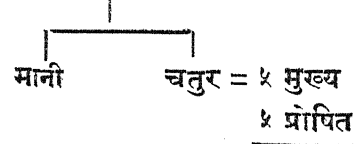
१०

(२) उपपति १, प्रोषित १ = २

(३) वैशिक ३—उत्तम, मध्यम, अधम, तीनों प्रोषित = ६

रसमंजरी में शठ का लक्षण तो ठीक कहा है। यथाः—

कामिनी विषय कपट पटुः शठः।

परन्तु वैशिक के ३ भेद उत्तम, मध्यम और अधम विशेष अनुचित प्रतीत होते हैं। यथा—उत्तम वैशिक, मध्यम वैशिक, अधम वैशिक। इस रसाभास को सुकविजन स्वयं विचार सकते हैं।

रसप्रबोध

इक सुकिया द्वै परकिया, सामान्या मिलि चार।
अष्ट नायिका मिलि स्वई, बत्तिस होत विचार॥
उत्तमादि सों मिलि वहै, पुनि छियानवे होत।
पुनि चौरासी तीन सै, पद्मिनि आदि उदोत॥
तेरा सौ बावन बहुरि, दिव्यादिक के संग।
यों गणना में नायिका, बरणी बुद्धि उतङ्ग॥

अर्थात्:—

स्वकीया १ + परकीया २ + सामान्या १ = ४
४ × ८ दशाभेद = ३२ × ३ उत्तमादि = ९६
९६ × ४ पद्मिन्यादि = ३८४ × ३ दिव्यादि = ११५२

ग्रंथ में भूल से १३५२ लिखा है परन्तु गणित से ११५२ आते हैं। इस ग्रन्थ में दशाभेद के सम्बन्ध से १० से भी अधिक भेद लिखे हैं। परन्तु गिन्ती करने में ८ ही भेद लिये हैं। इस ग्रन्थ के हिसाब से निम्नांकित भेद सिद्ध होते हैं:—

१ मुग्धा	९६
२ मध्या	९६
३ प्रौढ़ा	९६
४ परकीया	५७६
५ सामान्या	२८८
कुल	११५२

इस ग्रंथ में ज्येष्ठा, कनिष्ठा तथा धीरादि भेद लिखकर भी गिन्ती में नहीं लिये। मुग्धा के ५ भेद माने हैं:—

१ अंकुरितयौवना
२ शैशवयौवना

३ नवयौवना	आगतयौवना दरघातयौवना
४ नवलअनङ्गा	अविदितकामा विदितकामा
५ नवलवधू	नवोढ़ा विश्रब्धनवोढ़ा

परन्तु गिन्ती में नहीं लिये।

नायक भेद

(१) पति ४ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ठ, शठ × ३ उत्तम, मध्यम, अधम=१२×३ दिव्यादि=३६×४ धीरललित, धीरोदित, धीरोदात्त, धीरप्रधान, = १४४

(२) उपपति ३ गूढ़, मूढ़, आरूढ़, × ३ दिव्यादि=९
९ × ४ धीरललितादि = ३६
३६ × ३ उत्तमादि = १०८

(३) वैशिक २ अनुरक्त, मत्त × ३ दिव्यादि = ६
६ × ४ धीरललितादि = २४
२४ × ३ उत्तमादि = ७२

३२४

रसलीनजी एक श्रेष्ठ कवि हैं। रचना उनकी बहुत ललित है परन्तु रसमें ऐसे लीन थे कि भेदोपभेद करने में आप सबों से अधिक बढ़ गये। यहां तक कि आपने धीरललितादि भेद उपपति और वैशिक में भी लगा दिये।

लक्ष्मीश्वर विनोद।

लक्ष्मीश्वरविनोद में नायिका भेद का गणित इस प्रकार पाया जाता है:—

मुग्धा—४ पद्मिन्यादि×२ ज्येष्ठा, कनिष्ठा=८×२ नवोढ़ा, विश्रब्धनवोढ़ा=
१६ × ३ उत्तमादि = ४८ × २ ज्ञात, अज्ञात =९६
९६ × १० दशाभेद = ९६०
मध्या—४ पद्मिन्यादि × २ ज्येष्ठा, कनिष्ठा =८×३ उत्तमादि =२४
२४ × १० दशाभेद = २४०
प्रौढ़ा—४ पद्मिन्यादि × ३ उत्तमादि = १२×२ रति, आनन्द
=२४×२ जेष्ठा, कनिष्ठा = ४८×१० दशाभेद = ४८०
परकीया—४ पद्मिन्यादि×३ उत्तमादि=१२×२ ऊढ़ा, अनूढ़ा=२४
२४× ६ विदग्धा, लक्षिता, गुप्ता, कुलटा, मुदिता, अनुशयाना=
१४४×१० दशाभेद =१४४०
सामान्या - ४ पद्मिन्यादि × ३ उत्तमादि = १२ × १० दशाभेद = १२०
कुल ३२४०

इस ग्रंथ में धीरादिक भेद नहीं हैं।

नायक भेद

पति ४ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ठ, शठ × ३ उत्तम, मध्यम, अधम
= १२ × ४ मानी, चतुर, प्रोषित, अनभिज्ञ = ४८
उपपति तथा = ४८
वैशिक तथा = ४८

आपने पति, उपपति और वैशिक को समान दृष्टि से देखकर एकही लकीर में घसीटा है।

काव्यप्रभाकर

काव्यप्रभाकर में नायिका भेद का प्रस्तार इस प्रकार है:—

मुग्धा १० दशाभेद +२ ज्ञात, अज्ञात = १२ × २ ज्ये. क. = २४
२४×३ दिव्यादि= ७२×४ पद्मिन्यादि= २८८×३ उत्तमादि= ८६४

मध्या १० दुशाभेद + ३ धीरादि = १३ × २ ज्ये. क. = २६
२६ × ३ दिव्यादि = ७८ × ४ पद्मिन्यादि = ३१२
३१२ × ३ उत्तमादि = ९३६

प्रौढ़ा १० दशाभेद + ३ धीरादि = १३ + २ रतिप्रीता, आ. स.
= १५ + ३ अन्यसु. दु, मान, गर्विता = १८
१ १ १
१८ × २ ज्ये. क.= ३६ × ३ क्रियादि= १०८
१०८ × ४ पद्मिन्यादि = ४३२
४३२ × ३ उत्तमादि = १२९६

परकीया १० दशाभेद + ३ अन्य सु. दु, मान, गर्विता
१ १ १
= १३ + ८ ऊढ़ा, अनूढ़ा, गुप्तादि = २१
१ १ ६
२१ × ३ क्रियादि = ६३ × ४ पद्मिन्यादि = २५२
२५२ × ३ उत्तमादि = ७५६

सामान्या १० दशाभेद + ३ अन्य सु. दु, मान, गर्विता = १३
१ १ १
१३ × २ स्वतंत्रा, जननीआधीना = २६
२६ × ३ क्रियादि = ७८ × ४ पद्मिन्यादि = ३१२
३१२ × ३ उत्तमादि = ९३६

कुल ४७८८

सू०—का. प्र. के २३८ पृष्ठ की तालिका में प्रौढ़ा के आगे अन्य सु० दु०, मान और गर्विता के नीचे १, १, १ का अंक छपने से छूट गया ।

नायक भेद

काव्यप्रभाकर में नायक भेदों का प्रस्तार अलग नहीं लिखा है पर उसमें नायक भेद यों लिखे हैं :—

(१) पति ५ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट, शठ, अनभिज्ञ×२ मानी, प्रोषित = १०
(२) उपपति २ वचनचतुर क्रियाचतुर × २ मानी, प्रोषित = ४
(३) वैशिक १ × २ मानी, प्रोषित = २

१६

अन्यान्य ग्रंथ

रसकुसुमाकर, जगद्विनोद और रसराज में भेदोपभेद तो दिये हैं पर उनमें उनके प्रस्तार का गणित अलग नहीं दिया है। काव्यप्रभाकर और इन ग्रन्थों में दिये हुए नायिका भेद प्रायः एक से हैं, परन्तु नायक भेदों में कुछ अन्तर है यथाः—

नायक भेद

रसकुसुमाकर में—

(१) पति ५ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ठ, शठ, अनभिज्ञ×२ मानी, प्रोषित = १०
(२) उपपति २ वचनचतुर, क्रियाचतुर × २ मानी, प्रोषित = ४
(३) वैशिक २ मानी, प्रोषित = २

१६

रसराज में—

(१) पति ४ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ठ, शठ

वचनचतुर क्रियाचतुर

५ × ४ मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर, प्रोषित = २०
१ १ १ १

(२) उपपति १ × ४ मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर, प्रोषित = ४
१ १ १ १

(३) वैशिक १ × ४ मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर, प्रोषित = ४
१ १ १ १

२८

जब एक बार वचनचतुर और क्रियाचतुर तीनों भेदों में मान लिया तब शठ में अलग ये दो भेदों के मानने की आवश्यकता नहीं रहती यदि इन दो भेदों को निकाल दें तो भेद यों हो सकते हैं:—

पति ४ × ४ = १६
उपपति १ × ४ = ४
वैशिक १ × ४ = ४

२४

जगद्विनोद में नायकभेद यों वर्णित हैं:—

(१) पति ४ अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट, शठ × ४ मानी, वचनचतुर,
१　१
क्रियाचतुर, प्रोषित　　= १६
१　१
+ १ अनभिज्ञ (नायक आभाससमान)　　= १
१७

(२) उपपति १ × ४ मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर, प्रोषित = ४
१　१　१　१

(३) वैशिक १ × ४　　तथा　　= ४
२५

अनभिज्ञ नायक को नायक का आभास मानना बहुत ठीक है। अनभिज्ञता के कारण न तो वह मानी न चतुर हो सकता है। इसमें प्रोषित का भेद भी मानना ठीक नहीं है क्योंकि 'जैसे कता घर रहे तैसे गये विदेश'।

पूर्ण विचार करके देखो तो जगद्विनोद का मत सर्वोत्तम प्रतीत होता है। इसमें उत्तम मध्यम और अधम का वा दिव्य अदिव्य और दिव्याऽदिव्य का बखेड़ा नहीं। सुकवियों ने लक्षण और उदाहरण ऐसी सुन्दर रीति से दिये हैं कि उनमें इनके अलग मानने की आवश्यकता ही नहीं रहती है। मेरी सम्मति में जगद्विनोदानुसार २५ भेदही मानना ठीक है।

दिव्यादिक भेद क्या हैं?

दिव्य — जैसे　　राम कृष्ण, विष्णु, इन्द्र
अदिव्य　　लौकिक
दिव्याऽदिव्य जैसे　　अर्जुन, युधिष्ठिरादि

लाक्षणिक भेद

प्र०—लाक्षणिक भेद कौन से हैं?

उ०—प्रियवर! लाक्षणिक भेद वे हैं जिनमें नायिका, स्वकीया, मुग्धा प्रौढ़ा, परकीया वा सामान्या के साधारण लक्षण वा उदाहरण दोहे कवित्त सवैया इत्यादि में कहे हों पर उनमें दशा इत्यादि का वर्णन न हो। यथा—

नायिका

रम्य नायिका पेखि, उपजे भाव सिंगार रस।
रीझि रहे हरि देखि, तिय तन छवि सुकुमारता ॥१॥

स्वकीया

निज पति की अनुरागिणी, सोइ स्वकीया जान।
प्राणनाथ तुम्हरे बिना, सुरपुर नरक समान ॥२॥

स्वकीया—मुग्धा अज्ञातयौवना

सो अजान जोबन तिया, जोबन जिहि न जनाय।
ढीलि परति क्यों घांघरी, आंगी तन न समाय ॥३॥

स्वकीया—मुग्धा ज्ञातनवोढ़ा

ज्ञात यौवना जानही, यौवन आगम अंग।
दिना द्वैकतें बाल क्यों, लखन लगी निज अंग ॥४॥

स्वकीया—मुग्धा विश्रब्धनवोढ़ा

सो विश्रब्ध नवोढ़ जिहि, पति पर कछु परतीत।
दूर गये पिय लालसा, निकट भये भय प्रीत ॥५॥

स्वकीया—मध्या

मध्या तन में राजहीं, लज्जा मदन समान।
कहन चहति कहि नहिं सकति, लगति सखी के कान ॥६॥

स्वकीया—प्रौढ़ा

प्रौढ़ा लज्जा ललित कछु, सकल केलि की खानि ।
तिय इकन्त में कन्त कहँ, अंक भरति मनमानि ॥७॥

परकीया

गुप्त प्रेम परपुरुष सों, परकीया की रीत ।
छूटै पति परिवार बरु, छुटै न मोहन प्रीत ॥८॥

सामान्या (गणिका)

सामान्या धन लोभतें, करत जनन सों प्रेम ।
आजु हार प्रिय देहु कल, लइयो बिंदिया हेम ॥९॥

प्रियवर ! भेदोपभेद बढ़ाने में कोई सार नहीं । सर्व्वदा इस बात का ध्यान रहे कि वे ही भेद माननीय हैं जो साध्य हैं । असाध्य भेद मानकर गणित चाहे जितना बढ़ा लेव पर उससे कुछ लाभ नहीं । इसलिये बहुत विचार कर मैंने १०८ भेद रखे हैं जिनका वर्णन आगे है वे कहां तक ठीक हैं इसका निर्णय आपही पर छोड़ता हूं ।

क्या श्रीराधिकाजी परकीया हैं ?

श्री जगज्जननी जगदीश्वरी अयोनिसंभवा श्रीराधिकाजी श्रीकृष्ण को प्राणों से भी अधिक प्यारी हैं । देवीभागवत में भी उनका स्थान सब से ऊंचा है । देवियों में वे सब से श्रेष्ठ मानी गई हैं और श्रीकृष्ण के वाम भाग से उनकी उत्पत्ति है । यथार्थ में श्रीकृष्ण और राधिका एकही हैं । एकही के दो रूप हैं अर्थात् पुरुषरूप से श्रीकृष्ण और स्त्रीरूप से राधिका । ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में इसके अनेक प्रमाण मिलतेहैं । यथा:—

१ श्री राधिका साच श्रीकृष्ण वामभागांशशक्तिः ।

२ स्वेच्छामयः स्वेच्छयाच द्विधारूपो बभूवह ।
स्त्रीरूपा वामभागांशा दक्षिणांशः पुमान् स्मृतः ॥

३ एकामूर्तिर्द्विधा भूता भेदो वेदे निरूपितः।
इयं स्त्री न पुमान् किंवा सा वा कान्तापुमानयम्॥

४ राधा रासेश्वरी रासवासिनी रसिकेश्वरी।
कृष्ण प्राणाधिका कृष्णप्रिया कृष्णस्वरूपिणी।
कृष्ण वामांश संभूता परमानन्द रूपिणी।
कृष्णा वृन्दावनी वृन्दा वृन्दावनविनोदिनी॥

५ स्वयं राधा कृष्णपत्नी कृष्ण वक्षः स्थलस्थिता।
प्राणाधिष्ठातृ देवीच तस्यैव परमात्मनः॥

६ आदौराधां समुच्चार्य्य पश्चात् कृष्णं विदुर्बुधाः।
निमित्तमस्यमां शक्तं वद भक्त जनप्रिय॥

श्री राधिकाजी मनसा वाचा कर्म्मणा से श्रीकृष्ण की चरणानुगामिनी थीं उन्हीं के चितवन और प्रेम में सदा मग्न थीं। गर्ग संहिता, ब्रह्मवैवर्त पुराण, सूरसागर, ब्रजविलासादि ग्रंथों में उनका सांगोपांग विधिवत् विवाह श्रीकृष्ण के साथ वर्णित है। राधाजी के ही वाम भाग से लक्ष्मीजी की और दक्षिण भाग से सरस्वतीजी की उत्पत्ति है ऐसी परम पवित्रा, शुद्ध चरित्रा, प्रातः स्मरणीया, परमाराध्या, वृषभानु नंदिनी राधिकाजी का वर्णन कोई कोई सम्प्रदाय वाले परकीया भावमें करते हैं और कहते हैं कि उनका विवाह किसी नपुंसक के साथ हुआ था। वासुदेव रहस्य में ऐसी एक कथा मिलती है कि राधा का विवाह अतिमन्युक के साथ हुआ था परन्तु वह कथा एक दूसरी कृत्रिमा (कल्पित, बनावटी) राधा की है उस कथा परभी सहसा विश्वास नहीं होता और वह विवाह हुआ भी हो तो असल राधिकाजी से उसका बिलकुल संबंध नहीं है। राधिकाजी का विवाह वृन्दावन लीला के पूर्व्वही श्रीकृष्ण के साथ साक्षात् ब्रह्माजी द्वारा ब्रजके भाण्डीर वनमें हुआ था तभी से उनकी संज्ञा कृष्णप्रिया, कृष्णवनिता, कृष्णकांता, कृष्णप्राणाधिक प्रिया, कृष्णवल्लभा इत्यादि हुई। वे तो साक्षात् योगेश्वरी, रासेश्वरी और वृन्दावनेश्वरी हैं। क्या ऐसे नाम परकीया के हो सकते हैं? उसी के साथही साथ देखिये तो श्रीकृष्ण को भी राधारमण, राधाकांत, राधापति, राधावल्लभ, ब्रजठाकुर, ठाकुरजी महाराज इत्यादि कहते हैं क्या ऐसे नाम उपपति के

हो सके हैं? कदापि नहीं। जहां देखो तहां राधा कृष्ण, राधामाधव, राधे-श्याम का पवित्र नाम स्मरण किया जाता है। भाषा में भी राधिकाजी को श्यामा, प्रियाजी, लाड़िलीजी, श्रीजी, ब्रजरानी, ठकुराइन, ठकुरानी इत्यादि नामों से संबोधित करते हैं। श्रीकृष्ण तो लीला पुरुषोत्तम हैं राधाजी उनकी अर्द्धांगिनी और धर्मपत्नी हैं। राधाकृष्ण की लीलाओं का पारावार नहीं उनका विहार नित्य है। राधिकाजी श्रीकृष्ण की परम प्रेमिणी और अनन्य भक्ता हैं वे श्रीकृष्ण से कदापि जुदी नहीं हो सक्तीं।

श्रीराधिकाजी में परकीयत्व आरोपित करना महादोष है। कविवर पद्माकर और मतिरामजी ने इस विषय में बहुत विचार से काम लिया है। परकीया संबन्धी दशविध भेदों में अनेक कवित्त वा सवैया कहे हैं पर उनमें राधिकाजी का नाम नहीं लिखा।

श्रीराधिकाजी के उत्तमा होने के विषय में एक कविकी क्याही सुंदर उक्ति हैः—

(राधाजी की उक्ति)

जो मथुरा हरि जाय बसे हमरे जिय प्रीति बनी रहि सोऊ।
ऊधो बड़ो सुख येहि हमें अति नीकी रहैं वर मूरति दोऊ।
मेरेही नाम की छाप पड़ी अरु अंतर बीच कहैं नहिं कोऊ।
राधिका कृष्ण सबै तो कहैं पर कूबरी कृष्ण कहै नहिं कोऊ॥

कहिये क्या ऐसी प्रगटोक्ति कोई परकीया कर सक्ती है?

परकीया तो अप्रगट पर पुरुषानुरागिणी होती है। वह तो अपना प्रेम छिपाने का प्रयत्न करेगी। कूबरीही क्यों रुक्मिण्यादि आठ पट्टरानियों में से किसी का नाम भी कृष्ण के पूर्व्व नहीं लिया जाता। यह सौभाग्य तो केवल राधिकाजी को ही प्राप्त है। किसी कविने ठीकही कहा हैः—

राधाकृष्ण राधाकृष्ण राधाकृष्ण कहिये जू,
बिना राधा कहे फल आधा कृष्ण नाम को।

प्र०—क्यों जी मतिरामजी ने तो परकीयांतर्गत गुप्तादि भेदों में कई स्थलों में राधिकाजी का नाम लिखा है और एक स्थल में

पद्माकरजी ने भी राधिकाजी को परकीया कहा है फिर आपके सिद्धांत की संगति कैसे होगी। यथाः—

अनूढ़ा

मैं सुनि आई नंद घर, अब तू होहु निसंक।
राधे! मोहन ब्याह सों, जैहै धोय कलंक॥

(मतिराम)

वचनविदग्धा

आई है निपट सांझ गैयां गई घर मांझ व्हातें दौरि आई मेरो कह्यो कान्ह कीजिये। हौं तो हूं अकेली और दूसरो न देखियत वनकी अँधेरी मांझ भारी भय भीजिये। कवि मतिराम मनमोहनसों पुनि पुनि राधिका कहत बात सांच पै पतीजिये। कबकी हूं हेरत न हेरे हरि पावत हौं बछरा हिरानो सो हिराय नेक दीजिये॥

(मतिराम)

प्रथम अनुशयाना

आई ऋतु पावस अकास आठों दिसन में सोहत स्वरूप जल धरन की भीर को। मतिराम सुकवि कदंवन की बास जुत सरस बढ़ावै रस परस समीर को। भौन तें निकसि वृषभानु की कुमारि देख्यो तासमै सहेट को निकुंज गिर्‍यो तीर को। नागरी के नैननि ते नीर को प्रवाह बढ़्यो निरखि प्रवाह बढ्यो जमुना के नीर को॥

(मतिराम)

उत्तमादूती

(राधाप्रति)

गोकुल की गलिन गलिन यह फैली बात कान्है नंदरानी वृष भानु भौन ब्याहतीं। कहै पद्माकर यहांई त्यौं तिहारो चलै

न्याह को चलन यह सांवरो सराहतीं। सोचति कहा हौ कहा करि हैं चवाइन ये आनँद की अवली न काहे अवगाहतीं। प्यारो उपपति तें सु होत अनुकूल, तुम प्यारी परकीया तें स्वकीया होन चाहतीं॥
(पद्माकर)

उ०—प्रियवर! इसका समाधान इसी प्रकरण के अंत में मिलेगा। अनूढ़त्व दो प्रकार का होता है १ शुद्ध २ अशुद्ध। शुद्ध अनूढ़त्व पूर्व्वानुराग से उत्पन्न होता है इसमें परकीयत्व का आभास मात्र है यथार्थ परकीयत्व नहीं। जैसे पार्व्वतीजी का शिवजी प्रति, जानकीजी का रामजी प्रति और रुक्मिणीजी का श्रीकृष्ण प्रति। अशुद्ध अनूढ़त्व केवल काम वासना से होता है ऐसा अनूढ़त्व निंद्य और अवर्णनीय है।

प्र०—क्योंजी सूरसागर तथा ब्रजविलासादि ग्रंथोंमें तो अनेक लीलाएं होजाने के पश्चात् महामंगल रासलीला में राधाकृष्ण के विवाह का वर्णन है विवाह के पूर्व्व जो राधाकृष्ण की लीलाएं हुई उनमें राधाजी प्रति अनूढ़त्व मानने में क्या दोष है?

उ०—प्रियवर! शंका आप की ठीक है राधाकृष्णका विवाह पहिले ब्रह्माजी द्वारा ब्रज के भाण्डीर वन में होही चुका था परंतु यह बात ब्रजवासियों को विदित नहीं थी, इसलिये लौकिक रीतिसे दूसरी बार राधाकृष्ण का विवाह ब्रजमें हुआ। इस लौकिक विवाहके पूर्व्व जो राधाकृष्ण की लीलाएं ब्रज में हुई उनमें नायिका भेदानुसार राधाजी को अनूढ़ा मानना ही पड़ेगा। यह पूर्व्वानुराग का अनूढ़त्व परकीया का आभास मात्र है। उसमें यथार्थ परकीयत्व नहीं है। पद्माकरजी के उन्मादूती वाले उदाहरण में जो परकीया शब्द आया है वह इस बात को पुष्ट करता है कि राधाजी का विवाह किसी दूसरे के साथ नहीं हुआ था। यदि हुआ होता तो परस्त्री (परकीया) कभी स्वकीया होही नहीं सक्ती। राधाजी का अनूढ़त्व शुद्ध था और अनूढ़त्व भेद परकीया के भेदों में मानागया है इसलिये परकीया शब्द लिखा है परंतु ऐसा शुद्ध अनूढ़त्व परकीया का आभास मात्र है।

प्र०—जो लोग राधिकाजी का अनूढ़त्व वर्णन करना चाहते हैं उन्हें कौन कौन से भेद कहना उचित और कौन कौन से भेद कहना अनुचित है ?

उ०—राधिकाजी में गुप्तादि छै भेदों में से कुलटत्व का कथन करना अत्यन्त अनुचित है। अन्यसुरतदुःखिता भेद तो स्वकीया में भी है, यदि अन्यसुरतदुःखिता भेद कहना हो तो स्वकीया की भांति कहें। स्वयंदूती का भेद केवल परकीया (ऊढ़ा) में फबता है अनूढ़ा बिचारी को इतना साहसही नहीं। प्रोषितपतिकादि १० भेद जब स्वकीया मेंभी हैं तब राधिकाजी का कथन परकीया की भांति करना व्यर्थ है। करना होतो स्वकीया की भांति किया जावे सारांश यह है कि वर्णन इस प्रकार किया जावे कि राधिकाजी में जारत्व आरोपित न हो। अश्लीलता से तो अवश्य बचनाही चाहिये।

प्र०—नवीन कवियों को इस विषय में क्या उचित है ?

उ० नवीन होनहार कवियों प्रति मेरा निवेदन है कि स्वकीया के भेदोपभेद में राधाःकृष्ण का नाम यथेच्छ लिखें परंतु परकीया के दशविध भेदों में राधाजी का नाम न लिखें अर्थात् परकीया नायिका की भांति उनके नामका प्रयोग न करें। परकीया तो जारिणी होती है और उससे प्रीति करनेवाला उपपति वा जार कहाता है क्या ऐसा भाव अपने इष्टदेव राधाकृष्ण पर उचित है ? इसका आप स्वयं विचार करसकते हैं। राधाकृष्ण तो हिंदूमात्र के इष्टदेव हैं उनके नाम स्मरण से तथा युगलमूर्त्ति के दर्शन से सब कृतार्थ होते हैं इसलिये ऐसी रचना कीजावे कि धर्म पर आघात न पहुंचे और शास्त्रोक्त नायिका भेद के कथन में भी बाधा न उत्पन्न हो। ब्रजबनिता श्रीकृष्ण पर मोहित थीं नायिका भेदानुसार वे अवश्य परकीया हैं। गुप्तादि भेदों में अपना ऐब छिपाने के लिये यदि वे राधाकृष्ण का नाम लेवें तो हानि नहीं।

प्र०—क्योंजी श्रीकृष्ण तो सब गोपियों से समान प्रीति रखते थे तो क्या वे उपपति वा जार नहीं हुए ?

उ०—श्रीकृष्णजी न तो उपपति हैं न जार हैं वे तो अच्युत (जो धर्म से

तो त्रिलोकीनाथ योगेश्वर हैं । उनमें पर स्त्री सम्भोग संभवही नहीं और जबतक सम्भोग नहीं तबतक उपपतित्व भी नहीं । पति तो हैं वे केवल राधिकाजी के । वे तो दक्षिण नायक हैं । गोपियां उनको पति भाव से स्मरण करती थीं और उन्हीं को अपना सर्वस्व समझती थीं । उनकी अटल भक्ति तथा प्रेम देखकर श्रीकृष्ण भी उनसे समान प्रीति रखते थे, केवल प्रीतिविनोद वा विलासादि से वे जार नहीं कहे जासकते ।

प्र०—तो क्या गोपिकाओं के संबन्ध में भी कृष्ण का नाम न कथन किया जावे ?

उ०—जहां श्रीकृष्ण पर जारत्व आरोपित होता हो वहां उनका नाम कथित न किया जावे यदि जारत्व का आभास मात्र हो तो हानि नहीं । सबसे सुगम उपाय तो यह है कि परकीया के दशविध भेदों में जहां स्त्री पक्ष हो वहां किसी स्त्री विशेष (खास) का नाम न लिया जावे विशेष नाम के बदले वहां प्यारी, तिया, सांवरी, भामती, कामिनी, नागरी, मोहिनी, बाल बाम, गोपवधू, व्रजवनिता, गोरी, रसीली, छबीली, नवेली, अलबेली, सजनी, स्यानी, चातुर, चन्द्रमुखी, मयंकमुखी, मृगनैनी, सुन्दरी इत्यादि शब्दों का प्रयोग करें और पुरुष पक्ष में पिया, प्रीतम, भावते, मीत, बालम, राउर, छैल, छली, प्यारे, प्राणप्यारे, मनभावन, चितचोर, रंगीले, रसीले, छबीले, लाल, ललन, कपटी, निरदई, निरमोही, बेदरद इत्यादि शब्दों से काम निकाल लेवें ।

प्र०—क्योंजी ! बहुधा लोग श्रीकृष्ण को चोर जार शिखामणि कहते हैं क्या यह ठीक नहीं ?

उ०—प्रियवर ! यह वचन भी ठीक है केवल समझ का फेर है यह कथन आलंकारिक है श्रीकृष्ण परमात्मा भक्तजनों के चित्त को चुरा लेते हैं अतएव चोर कहे जाते हैं तथा सर्वव्यापी होने के कारण उनका रमण एक साथही सर्वत्र है माता में, पिता में, बहिन में, पुत्री में, स्त्री में, जड़ में, चेतन में जहां देखो वहां उनका रमण है अतएव वे जार कहाते हैं । लौकिक जारत्व उनमें संभव नहीं ।

प्र०—क्या [illegible] और मतिरामजी ने भी राधिका का वर्णन स्वकीया की [illegible] है ?

उ०—जीहाँ ! स्वकीया की भांति किया है । देखिये जगद्विनोद में पद्माकरजी के स्वकी[illegible] उदाहरण ज्ञातयौवना, मध्यास्वाधीनपतिका, मध्या[illegible], वैसेही मतिरामजीका रसराजग्रंथ में स्वकीयांतर्गत मध्या[illegible] इन्हीं [illegible]राधाजी [illegible] नाम है । भाई साहब ! ये दोनों कविही क्यों, कवि लछिरामजी के प्रेम रत्नाकर ग्रंथ में देखिये तो स्वकीया और नवोढ़ा का उदाहरण राधाजी के ही नाम से है । बृहद्व्यंगार्थचंद्रिका राव गुलाबसिंह में स्वकीयांतर्गत मुग्धा और प्रौढ़ा के उदाहरण देखिये तो राधाजी पर ही घटित हैं । तोष कविने भी सुधानिधि में स्वकीयांतर्गत मुग्धा और गुणगर्विता का उदाहरण राधाजी के नाम से ही दिया है कहां तक कहें श्रीदेवकवि ने भी भावविलासमें राधाजी का वर्णन स्वकीयांतर्गत मध्या में किया है । प्राचीन ग्रंथ सूरसागर और व्रजविलास के पद तो आपको ज्ञातही हैं ।

सूरसागर (विवाह प्रसंग)

सूरदासहिं भयो आनन्द पूजी मन की साधा ।
श्रीलाल गिरिधर नवल दूलह दुलहिन श्रीराधा ॥

व्रजविलास (विवाह प्रसंग)

बढ़यो अति आनंद उर मध साध सब पूरण भई ।
मदनमोहनलाल दूलह राधिका दुलहिन भई ॥
दूलह नंदकुमार, दुलहिन श्रीराधाकुँवरि ।
सन्तन प्राण अधार, अविचल यह जोरी सदा ॥

कहिये प्रियवर ! क्या अबभी आपको राधाजी के स्वकीया होने में कोई सन्देह रह सकता है ? सारांश यह है कि जो काव्य मर्म्मज्ञ हैं वे राधिकाजी का वर्णन स्वकीया की भांति ही करते हैं बहुत आगे बढ़े तो

शुद्ध अनुकूल भी वर्णन करते हैं परंतु परकीया के १० विध भेदों में राधिकाजी का नाम नहीं लिखते अर्थात् परकीया नायिका की भांति उनका वर्णन नहीं करते। नवीन कवियों को भी उनसे शिक्षा ग्रहण कर उन्हीं का अनुसरण करना उचित है। संग्रहकर्त्ताओं ने कोई कोई सवैया वा कवित्तों को जिसमें राधिकाजी का नाम आया है भूल से परकीया के १० विध भेदों में कहीं कहीं रख दिया है परन्तु वह प्रमाणिक नहीं, नवीन कवियों को सावधान रहना चाहिये। कहाभी है:—

महाजनो येन गतः सपन्थाः।

प्र०—क्यों जी! श्रीकृष्णजी की तो १६१०८ विवाहिता स्त्रियां थीं राधिकाजी को भी गिनो तो १६१०९ होती हैं यह बात कैसी है?

उ०—गोलोक और वृन्दावन में श्रीकृष्ण की पत्नी श्रीराधिकाजी थीं, वे महामाला में सुमेरु सदृश प्राणों से भी अधिक प्यारी थीं। रुक्मिण्यादि ८ पट्टरानियां द्वारिका में प्राणप्रिया अर्थात् प्राणों के समान प्यारी थीं। (वैकुंठ में जो विष्णुपत्नी लक्ष्मी जी हैं उन्हीं का अवतार रुक्मिणीजी हैं) और नरकासुर से उद्धार कर एक साथही विवाहिता १६१०० स्त्रियां प्यारी थीं।

शंका समाधान

प्रश्नोतर की रीत से यहां जटिल और वादग्रस्त नायिकाभेदों का शंका समाधान लिखा जाता है:—

प्र०१—नायिका किसको कहते हैं। क्या समस्त स्त्रीजाति नायिका है?

उ०—नहीं समस्त स्त्रीजाति नायिका नहीं हैं। अल्पवयस्क कन्या, वृद्धा, रोगिणी, कुरूपा, अंगहीन इत्यादि नायिका नहीं हैं। नायिका की परिभाषा है " श्रृंगार रसावलंवन विभावरूपानारी " यथा:—

रस सिंगार को भाव उर, उपजत जाहि निहारि।
ताहि को कवि नायिका, बरणत विविध विचार॥

अर्थात् जिसे देखकर शृंगाररस का भाव हृदय में उपजे वही नायिका है। यथाः—

रम्य नायिका पेखि, उपजै भाव सिंगार रस।
रीझि रहे हरि देखि, तिय तन छबि सुकुमारता॥

प्र० २—तो क्या जिसको लड़का पैदा होगया है वह भी नायिका है?

उ०—लड़का लड़की पैदा होजाने से हानि नहीं जब तक उसमें लावण्यता है और उसे देखकर शृंगाररस का भाव हृदय में उत्पन्न होता है तब तक वह नायिका है।

प्र० ३—विशाखान्तागता मेघा प्रसूतान्तंच यौवनम्।
प्रणामान्तः संता कोपो याचनान्तंहि गौरवम्॥

इस श्लोक के दूसरे चरण से तो यह अर्थ निकलता है कि प्रसूत होने पर यौवन का अंत होता है फिर जिसके बच्चा पैदा हुआ है वह नायिका कैसे कहायगी?

उ०—प्रियवर! इस पद से यौवन के अंत का अर्थ तो निकलता है परंतु नायिकत्व के अंत का नहीं। विचार करने का स्थान है कि इस देश में तो पूर्ण युवती होने के पूर्वही दस दस ग्यारा ग्यारा वर्ष की कन्याओं को भी संतान उत्पन्न होजाती है इस दशा में क्या उसे युवती के पद से खारिज करना न्यायसंगत होगा? कदापि नहीं यह दोष तो समाज का है अल्प वय में विवाह करने का दोष समाजही दूर कर सकती है। प्रौढ़ कवियों ने तो ५५ वर्ष तक की आयु वाली को नायिका माना है यथाः—

आषोडशी भवेद्बाला तरुणी त्रिंशतामता।
पञ्च पञ्चाशती प्रौढ़ा भवेद् वृद्धा ततः परम्॥

भला अल्प वय में संतानोत्पत्ति की वात छोड़ दें तो क्या यह संभव है कि ४० वा ५५ वर्ष तक भी किसी स्त्री को संतान न हो संतान तो वन्ध्या (बांझ) स्त्री को छोड़कर सब को होती है और होगी यह तो सृष्टि नियम ही है इसे कौन रोक सकता है पर

संतान होने से यौवन में कुछ न्यूनता होने पर भी उसका उस समय तक नायिकत्व नष्ट नहीं होता जब तक उसमें लावण्यता है नायिका का मुख्य लक्षण लावण्यताही है। क्या बिहारीलालजी सदृश रस सिद्ध कविका यह दोहा भी अप्रमाणिक हो सकता है ?

लरिका लेवे के मिसनि, लंगर मो ढिग आय ।
गयो अचानक आंगुरी, छाती छैल छुवाय ॥

क्या यह पद इस बात को पुष्ट नहीं करता कि संतान होने पर भी लावण्यता रहते नायिका बनी रहती है पुराणोक्त पंच कन्याओं के चरित्रों को कौन नहीं जानता, परन्तु अपनी अपूर्व लावण्यता तथा पुण्य श्लोका होने के कारण सदा सर्वदा के लिये उनका पवित्र नाम प्रातःस्मरणीय है। यथाः—

अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा, मंदोदरी तथा ।
पंच कन्या स्मरेन्नित्यं, महा पातक नाशनम् ॥

यद्यपि पंच कन्या विषय नायिका भेद से संबंध नहीं रखता तथापि उनकी संज्ञा कन्या तो है।

प्र०—नायिका शब्द का असल अर्थ क्या है ?

उ०—मन ले जाने वा हरण करने वाली स्त्री, अर्थात् जो पुरुष के मनको आकर्षित करे।

स्वकीया

स्वकीया का लक्षण यों हैः—

" स्वामिन्येवानुरक्ता स्वीया"

विधिवत् विवाहिता स्त्री जो अपने पति से ही प्रेम रखे वही स्वीया वा स्वकीया है। अर्थात्ः—

निज पति की अनुरागिणी, सोइ स्वकीया जान ।
प्राण नाथ तुम्हरे विना, सुरपुर नरक समान ॥

भाषाकवियों ने यहां तक इस लक्षण को बढ़ाया है कि—

निज पति ही के प्रेम मय, जाको मन बच काय ।
कहत स्वकीया ताहिसों, लज्जा शील सुभाय ॥

'मन वच काय' ये तो उत्तमा स्वकीया के लक्षण हुए ऐसा लक्षण करने से मध्यमास्वकीया और अधमास्वकीया में उसकी व्याप्ति न होने के कारण अव्याप्ति दोष आता है इन तीनों में अंतर अवश्य होना चाहिये नहीं तो उत्तमा, मध्यमा वा अधमा स्वकीया की विवेचना ही नहीं हो सकेगी । इसलिये ऐसा मानना ठीक होगा कि—

(१) मन, बच, काय से जो भजे अर्थात् सेवा करे सोई उत्तमा है 'बच' से क्या अभिप्राय है ? मधुरभाषिणी यथाः—

स्वपिय दोष लखि, उत्तमा धरैन मनमें रोष ।
सुखी रहौ कितहू रहौ, पिया हमें संतोष ॥

(२) मन और काया से तो भजे, परन्तु जो हित से हित और अनहित से अनहित करे अर्थात् हित हो तब मधुर बचन और अनहित हो तब कर्कश वचन कहें सो मध्यमा है । यथाः—

पिया दोष लखि मध्यमा, करै मान सनमान ।
सम्मुख लखि नँदनंद कहँ, वरजि मंद मुसकान ॥

(३) मन और काया से तो भजे परन्तु पति हित करे वा अनहित करै सबों को अनहित ही माने, सदा कर्कश बचन कहे सो अधमा है । यथाः—

पिय ज्यों ज्यों कर नेह, अधमा त्यों त्यों रिस करै ।
तीय कराति तउ तेह, पीय परत पांयन जऊ ॥

इसकी विवेचना रसिकविहारी जी ने बहुत अच्छी की है । यथाः—

हित अनहित कछु करै पीय, तिय हित ही माने ।
कविजन सकल प्रवीन, उत्तमा ताहि बखाने ॥
जो हितते हित धरै बहुरि, अनहित अनहित तें ।
बुधजन सकल दृढ़ाय, कहैं मध्यमा सुचित तें ॥
जो पति कछु हित अनहित करै, तिय सब अनहित मानहीं ।
बहु रस ग्रंथन देखि कै, अधमा ताहि बखानहीं ॥

स्वकीया के सर्वमान्य भेद तीन हैं । अर्थात्ः—

(१) मुग्धा अंकुरितयौवना ।
(२) मध्या समानलज्जामदना ।
(३) प्रौढ़ा केलिकलापकोविदा ।

मध्या के सर्वमान्य उपभेद ये हैं:—

(१) अज्ञातयौवना—नामही से भेद प्रगट है ।

(२) ज्ञातयौवना { नवोढ़ा १—अतिडर अतिलाज से रति न चाहे।
विश्रब्धनवोढ़ा २—पति की कुछ २ प्रतीत मानने लगे।

मध्या के अन्य उपभेद ये हैं:—

(मानसमय)

(१) धीरा—आदर करे और कोप से व्यंग जनावे । यथाः—

मध्या धीरा व्यंग रिस, तजै न पति सन्मान ।
स्वारथ परमारथ करत, हौ पिय नीति निधान ॥

(२) अधीरा—निरादर करे और प्रगट कोप जनावे । यथाः—

मध्य अधीरा रोस करि, करति अनादर कंत ।
जाव पिया जहँ निशि जगे, कस भूले हौ अंत ॥

(३) धीराऽधीरा—धीरवचना, परन्तु रोकर कोप जनावे । यथाः—

मध्या धीराधीर मृदु, भापि रोय सहरोप ।
भाग्य लिखी हम भोगतीं, पिया तुम्हैं नहिं दोष ॥

प्रौढ़ा के सर्वमान्य उपभेद मानसमय ३ और रतिसमय २ हैं:—

(मानसमय)

(१) धीरा—अति आदर करे किंतु रतिसे उदास रहे । यथाः—

प्रौढा धीरा रति विमुख, अति आदर की खानि ।
गई सुमुखि परंजक पैं, पिय अंक न लपटानि ॥

(२) अधीरा—तर्जन ताड़न द्वारा कोप जनावे । यथाः—

प्रौढ़ अधीरा दोप लखि, तरजति ताड़ति पीय ।
पुनि अस करिहो कहि हनति, पुहुप छरी सों तीय ॥

(३) धीराऽधीरा—रति से रूखी रहे और डर दिखावे । यथाः—

प्रौढ़ा धीर अधीर तिय, रति रूखी डरपाय ।
परिहै मोंहि अन्हाइबो, मत परसो पिय पांय ॥

(रतिसमय)

(१) रतिप्रीता—नामही से लक्षण प्रगट है । यथाः—

रतिप्रीता जिहि तीयको, अतिशय सुरति सुहाय ।
कान मूंदि पिय के तिया, भोर रही लपटाय ॥

(२) आनन्द सम्मोहिता—सुरत के आनन्द में मग्न और वेसुध होजाय । यथाः—

आनँद सम्मोहा सुरति, आनँद में पगिजाय ।
मगन होय तिय सुरतिमें, बौरी सी ह्वै जाय ॥

प्र०—मध्या और प्रौढ़ानुसार मुग्धा में धीरादिक भेद क्यों नहीं माने ?

उ०—उसमें लज्जावशात् मानही नहीं है। मुग्धा व्यंग्यबचन कहने में असमर्थ है।

गर्विता

इसको वक्रोक्तिगर्विता भी कहते हैं। इसके दो भेद हैं—

(१) रूपगर्विता—नामही से भेद प्रगट है। यथाः—

रूपगर्विता होत वह, गर्वरूप को धारि ।
मो मुख चंदा सम कहत, अजब इहां की नारि ॥
(चन्द्र में कलंक है और मैं बिना कलंक हूं)

(२) प्रेमगर्विता—नामही से भेद प्रगट है। यथाः—

करै प्रेम को गर्व जो, प्रेमगर्विता मान ।
दुख इतनो सखि मम पिया, देत न मइके जान ॥

किसी किसी ने गुणगर्विता भेद भी माना है परंतु वह प्रेमगर्विता के ही अंतर्गत है। रूपगर्विता और प्रेमगर्विता भेद प्रौढ़ाही में घटित हो सकते हैं। परकीया तो अपना प्रेम छिपाती है और सामान्या में ये भेद कथन करना नीरस है।

प्र०—क्या मुग्धा और मध्या में ये दोनों भेद नहीं होते ?

उ०—मुग्धा और मध्या में लज्जावशात् गर्व्वोक्ति का साहसही नहीं है।

प्र०—मुग्धा में तो साहस नहीं यह बात माननीय है परंतु मध्या में तो आठ आने मदन और आठ आने लाज रहती है तब उसमें साहस क्यों न मानें ?

उ०—प्रियवर ! ये दोनों लक्षण वक्रोक्तिगर्विता के अंतर्गत हैं आठ आने में से आठ आने गये तो शेष कुछ भी नहीं बचता । गर्विता पति से गर्व नहीं करती । अन्य स्त्रियों से वक्रोक्ति कहने के लिये प्रौढ़त्व चाहिये । जबतक प्रौढ़त्व नहीं तबतक वक्रोक्ति भी संभव नहीं ।

ज्येष्ठाकनिष्ठा

ब्याही जहां अनेक तिय, द्वैविध तिनहिं बखान ।
ज्येष्ठा पिय प्यारी अधिक, अन्य कनिष्ठा मान ॥

अनेक विवाहिता स्त्रियों में जो प्रीतम को सब से अधिक प्यारी हो वही ज्येष्ठा है अन्य कनिष्ठा । ज्येष्ठा व कनिष्ठा में केवल अधिक वा न्यून स्नेह कारण है, पहिली वा पिछली शादी वा छोटी बड़ी उमर से संबंध नहीं । अभिप्राय यह है कि " जाहि पिया चाहै सोई है सुहागिन " ।

रसमंजरी में ज्येष्ठाकनिष्ठा की व्याख्या यों है:—

(१) परिणीतत्वे सति भर्तुरधिक स्नेहा ज्येष्ठा ।
(२) परिणीतत्वे सति भर्तुर्न्यून स्नेहा कनिष्ठा ।

ज्येष्ठाकनिष्ठा का भेद वहीं विदित होता है जहां दोनों के उदाहरण एक साथ दिये जाते हैं। ज्येष्ठाका उदाहरण अलग और कनिष्ठाका उदाहरण अलग प्रायः किसी कविने नहीं दिया । ऐसी दशामें स्वकीयान्तर्गत मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा के समस्त नायिका भेदों में ज्येष्ठा वा कनिष्ठा के भेद निर्धारित करना वा ढूंढ़ निकालना अत्यन्त कठिन और असाध्य हैं । ज्येष्ठा और कनिष्ठा अपने अपने को पिय प्यारी समझती हैं अधिक और न्यूनस्नेह का भेद केवल पति के अंतःकरण में रहता है ।

साहित्यदर्पणकार ने इसका और अच्छा निर्णय किया है:—

कनिष्ठज्येष्ठ रूपत्वान्नायकप्रणयंप्रति, अर्थात् नायिका का ज्येष्ठत्व वा कनिष्ठत्व केवल नायक के प्रणय पर निर्भर है । ज्येष्ठा और कनिष्ठा भेद में स्वयं कुछ नायिकत्व नहीं है। रसिकप्रिया में भी इनका उल्लेख

नहीं है और रसमंजरी वा रसप्रबोध में इनको वर्णन करके भी गिनती में नहीं लिये। यहभी आवश्यक नहीं कि प्रत्येक नायक के एक से अधिक विवाहिता स्त्रियां हों। नायिका भेद में इन भेदों का रखना निरर्थक है। ये भेद केवल नाममात्र को हैं।

अन्यसुरतदुःखिता

यथा काव्यप्रभाकरेः—

अन्यसुरतदुखिता दुखित, लखि तिय तन रति अंक।
मोहित तन बहु छत सहे, नाहिन तोहि कलंक ॥

जिस स्त्री के तनपर निज प्रीतम के रति चिन्ह देखे उसी स्त्री से अपना दुख प्रगट करे वही अन्यसुरतदुःखिता है। यथा—हे सखी तूने मेरे लिये तन में बहुत घाव सहे हैं। सो तुझे कोई कलंक नहीं है व्यंग यह यह कि तू महा कलंकिनी है।

यह भेद प्रौढ़ा और परकीया में घटित हो सकता है मुग्धा, मध्या और सामान्या में नहीं क्योंकि मुग्धा और मध्या में लज्जावशात् दुःख प्रगट करने का साहस नहीं।

प्र०—क्या सामान्या अन्य सु. दु. नहीं हो सकती है?

उ०—हो तो सकती है परन्तु उसका वर्णन नीरस है।

मानवती

मानवती भेद विप्रलम्भ अर्थात् वियोग शृंगारान्तर्गत है। निज पति अन्य स्त्री पर आसक्त है ऐसा कुछ देख सुनकर जो स्त्री पति से मान करे वह मानवती है। यह मान तीन प्रकार का है। यथा जगद्विनोदे—

लघुमान

पर तिय दर्शन दोष तें, करै तीय कछु रोप।
लघु मानहिं सो जानिये, होत ख्यालही लोप ॥

मध्यममान

और तिया को नाम कहुं, पिय मुखतें कढ़िजाय।
होत मानमध्यम मिटै, सौहनि किये बनाय ॥

गुरुमान

आन तियारत पीउ लखि, होइ मान गुरु आइ।
पाइ परे भूषण भरे, छूटत कहूं बराइ ॥

ये तीनों भेद केवल प्रौढ़ा में घटित होते हैं।

प्र०—धीरादि और मानवती में क्या भेद है?

उ०—धीरा, अधीरा, धीराऽधीरा भेद संयोग शृंगारांतर्गत हैं। जहां नायिका को नायक पर अन्य स्त्री बिषयक रतिका संदेह हो वहां धीरादि भेद और जहां नायिका स्वयं कुछ देख सुन लेवे वहां मानवती जानिये। मानवती वियोग शृंगारांतर्गत है। मानवती में स्वयं नायक वा सखियों द्वारा मानमनौवल होता है।

प्र०—धीरादि, मानवती, खंडिता, अन्यसुरतदुःखिता ये भेद प्रायः एक से ही प्रतीत होते हैं। इनमें एक दूसरे से क्या अंतर है सो एकत्र ही पुनः संक्षेप में कहिये।

उ०—धीरादि-धीरादिक भेद केवल स्वकीयान्तर्गत मध्या और प्रौढ़ा में ही होते हैं। इनमें नायिका को रति का निश्चय नहीं नायकपर अन्य स्त्री से रति का संदेह मांत्र रहता है।

मानवती-मानवती वह है जहां नायिका स्वयं कुछ देख वा सुनकर नायक से मान करती है। यह भेद केवल प्रौढ़ा में घटित होता है।

खंडिता-खंडिता वह है जहां नायक रात्रि अन्यत्र रहकर प्रातःकाल घर में वापिस आता है तब नायक पर असाधारण रति

चिन्ह देखकर नायिका कुपित होती है अर्थात् कभी मौन धारण करती है और कभी व्यंग वचन कहती है। यह भेद स्वकीया, परकीया और सामान्या तीनों में घटित होता है ।

अन्यसुरतदुःखिता—निज प्रीतम के रति चिन्ह जिस अन्य स्त्री पर देखकर नायिका दुःखित होवे और उसी स्त्री से व्यंग वचन कहे वही अन्यसुरतदुःखिता है। यह भेद प्रौढ़ा और परकीया में घटित होता है ।

प्र०—यह कैसे मालूम हो कि अमुक अन्य सु० दु० स्वकीया है या परकीया ?

उ०—पद्य के चारों पदों में देखिये जहां मीत, छैल, रसिक, रसाल इत्यादि शब्द उपपतिसूचक हों वहां परकीया जानिये जहां ऐसे शब्द न हों वहां स्वकीया जानिये । यथा—

गई बाग कहि बात हौं, तुवहित लेन रसाल ।
सोनहिं ल्याई आपुही, छकि आई है बाल ॥ परकीया ।
कहा कहौं तोसों अली, अपने अपने भाग ।
मोहि दियो तन कनक विधि, दीनो तोहि सुहाग ॥ स्वकीया ।

धीरादि, खंडिता और मानवती इन तीनों भेदों की पहिचान के लिये यह दोहा स्मरण रखिये—

धीरादिक संदेह बस, खंडित मन अनुमान ।
मानवती लखि सुनि कछुक, ठानति पियसों मान ॥

परकीया

प्र०—परकीया का लक्षण क्या है ?

उ०—अप्रकट पर पुरुषानुरागा परकीया अर्थात् गुप्त परपुरुषानुरागी स्त्री को परकीया कहते हैं। परकीया के दो भेद हैं—ऊढ़ा और अनूढ़ा। ऊढ़ा अर्थात् जो उढ़रि जाय ।

ऊढ़ा

ऊढ़ा ब्याही और की, करै और सों प्रीत।
छूटे पति परिवार बरु, छुटै न मोहन मीत॥

अनूढ़ा

होत अनूढ़ा ब्याह बिन, सरस पुरुष रसलीन।
शिवा! सोइ बर देहु मुहिं, प्रीत जासु सँग कीन॥

प्र०—अनूढ़ा तो किसीसे ब्याही नहीं गई फिर वह परकीया कैसी हुई?

उ०—शंका तो ठीक है—पर धर्म शास्त्र का मर्म बहुत सूक्ष्म है। वहां तो यह विधान है कि कन्या का सर्व्वस्व माता पिता पर अवलंबित है वे चाहे जिसे देवें कन्या को इस विषय में अपनी इच्छा प्रगट करने वा बातचीत करने का अधिकार नहीं है। ये कहावतें तो प्रसिद्ध ही हैं:—

(१) बेटी जुइया किसकी, मात पिता दें तिसकी।
(२) गौ बेटी की एकहि रीति, जहां देहु तहँ पालैं प्रीति।

इस विषय में यह बात विचारणीय है कि अविवाहिता कन्या की जिस पुरुष से प्रीत लगजावे और उसीके साथ विवाह होजावे तो उसका अनूढ़त्व परम प्रशंसनीय है—जैसे श्रीजानकीजी का प्रेम श्रीरामजी से, श्री पार्वतीजी का श्रीशिवजी से, श्रीरुक्मिणीजी का श्रीकृष्ण से तथा दमयन्ती का नलसे। विवाह के पूर्व्व ऐसा प्रेम प्रशंसनीय है और [illegible] अनुराग से होता है। केवल काम वासना से विवाह के पूर्व्व प्रेम लगालेना निंद्य है। और ऐसे निंद्य भाव को सुकवि वर्णन भी नहीं करते हैं। इस अनूढ़ा भेद को न स्वकीया में रख सकते हैं न सामान्या (गणिका) में-तब परकीया में रखने के सिवाय दूसरी गति नहीं है इसलिये अनूढ़ा भेद को परकीया में ही रखना उचित है। ऊढ़ा और अनूढ़ा दोनों के छै छै भेद माने गये हैं यथा:—

१ गुप्ता

(१) भूतसुरत—जो बीती हुई प्रीति क्रिया को छिपावे । यथा—

भूत सुरत संगोपना, प्रथम भेद यह आय ।
फटिगो चीर करीर फँसि, लगे कंट तन घाय ॥

(२) वर्तमानसुरत—जो वर्तमान प्रीति क्रिया को छिपावे । यथा—

वर्तमान रति गोपना, भेद दूसरो जान ।
बहि जाती मैं सरित में, जो न गहत हरि आन ॥

(३) भविष्यसुरत—जो भविष्य प्रीति क्रिया को छिपावे । यथा—

है भविष्य रति गोपना, लक्षण नाम प्रमान ।
पुष्प लेन को जाय बन, शुक चोंथत अधरान ॥

२ विदग्धा

(१) वचन—जो वचनों की चतुराई से अपना कार्य्य साधे । यथा—

वचन विदग्धा साधती, वचन रचन सों काज ।
रैन अँधेरी सून घर, दई सहायक आज ॥

(२) क्रिया—जो क्रिया द्वारा अपना कार्य्य साधे । यथा—

क्रिया विदग्धा साधती, चतुर क्रिया कर काज ।
केश मांग छ्वै सैन किय, अर्द्ध निशा मिलु आज ॥

३ लक्षिता

जिस स्त्री का परपुरुष सम्बन्धी प्रेम कुछ चिन्हों से दूसरी स्त्री जानकर प्रगट कर देवे ऐसी लक्षित कीगई स्त्री को लक्षिता कहते हैं । यथा—

निरखि लक्षिता आनरत, करै प्रगट तिय आन ।
कहा छिपावत री लग्यो, अंजन हरि अधरान ॥

४ कुलटा

काम वासना की तृप्ति के लिये अनेक पुरुषों से प्रेम रखनेवाली निर्लज्जा । यथा—

कुलटा कुल बोरिन करै, बहु लोगनसों प्रेम ।
फरै सरस जन द्रुमन तें, हे विधि कर अस नेम ॥

५ अनुशयाना

(१) वर्तमान संकेत विघट्टना—वर्तमान संकेत स्थल वा सहेट (मिलने के गुप्त स्थान) का नष्ट होना । यथा—

पहिली अनुशयना दुखित, लखत नष्ट संकेत ।
ननदी लगत बसंत के, भइ दूबरि किहि हेत ॥

(२) भावि संकेत नष्टा—होनेवाले सहेट के नष्ट होने की शंका । यथा—

दूजी अनुशयना विकल, भावि सहेट अभाव ।
ससुरेहू बहु वाटिका, दुलहिन जनि पछिताव ॥

(३) रमणगमना—सहेट पर प्रीतम तो पहुंच गया ऐसा अनुमान कर अपनी अनुपस्थिति पर संतापित । यथा—

व्याकुल अनुशयना तृतिय, रमन गमन अनुमान ।
चौंकि, चकी, उझकी, झकी, सुनि वंशी धुनि कान ॥

६ मुदिता

वांछित परपुरुष की अकस्मात् प्राप्ति से प्रसन्न । यथा—

मुदिता मुदित जु होय प्रिय, बात घात सुनि देखि ।
कन्त गमन हरि आगमन, देखि प्रसन्न विशेखि ॥

प्र०—यह कैसे ज्ञात हो कि अमुक भेद ऊढ़ा का है वा अनूढ़ा का ?

उ०—जिस पद में विवाहिता का आशय प्रगट हो वहां ऊढ़ा, यथा-जहां पति, सास, ननंद, जिठानी, देवर, दिवरानी, गौना, सौत इत्यादिक का कथन हो, अन्यथा अनूढ़ा ।

किसीर ने इनके और भेदोपभेद किये हैं । यथा—

१ उद्‌बुद्धा—अपनी बुद्धि से ही पर पुरुष से प्रीति करे

२ उद्‌बोधिता—दूसरे की सीख में लगकर

३ साध्या—सहज में प्राप्त होजावे

४ असाध्या—जिसकी प्राप्ति कठिन हो

पर ऐसे भेदोपभेद निरर्थक प्रतीत होते हैं ये बाल की खाल खींचने के समान हैं ।

प्र०—क्योंजी क्या विधवा स्त्री भी परकीया हो सक्ती है ?

उ०—विधवा हो वा सधवा-पर पुरुष से प्रेम करने वाली अवश्य परकीया है परंतु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि नायिका भेद में विधवा का कथन नितांत नीरस है ।

सामान्या (गणिका)

सामान्या धन लोभतें, करै जनन सों प्रेम ।
आज हार प्रिय देहु कल, लइयो बिंदिया हेम ॥

सामान्या तो केवल धन लोभ के कारण प्रेम करती है इसमें जननीआधीना, स्वतंत्रा तथा नियमिता भेद मानना निरर्थक है । हां बहुमतानुसार सामान्या के दशविध दशाभेदों का वर्णन करना अनुचित नहीं है । कथन में अश्लीलता से अवश्य बचना चाहिये ।

दशानुसार नायिका के दशविध भेद।

१ प्रोषितपतिका

पिय के देशान्तर गमन से संतापित। यथा—

प्रोषितपतिका सोइ, पिय बिदेस सों दुखित जो।
निसिदिन काटत रोइ, पिय अबलौं बहुरे नहीं॥

२ खंडिता

अन्य नारी संभोग से असाधारण चिन्हयुक्त नायक के प्रातःकाल आने से कुपित। यथा—

दुखित खंडिता पीय तन, लखि पर तिय रति अंक।
को वह भागिनि पिय रँगी, लाली नैननि बंक॥

३ कलहांतरिता

प्रीतम से कलह करके पीछे पछताने वाली। यह दशा भ्रांति, सम्मोह, ज्वर, प्रलापादि से उत्पन्न होती है अर्थात् जब नायिका अन्यमनस्का हो। यथा—

कलहंतरिता कलह करि, पियसों पुनि पछताय।
रसन नयन अजगुत नहीं, कर हटक्यो पिय हाय॥

४ विप्रलब्धा

संकेतनिकेतने प्रियमनवलोक्य समाकुलहृदयाविप्रलब्धा। अर्थात् सहेट में प्रीतम की अप्राप्ति से व्याकुल। यथा—

विप्रलब्ध अकुलाय, पिय बिहीन संकेत लखि।
कहां गयो पिय हाय, सेज फूल अब शूल सम॥

५ उत्कंठिता

संकेत स्थले भर्त्तुरनागमनकारणंचिंतयतिया। अर्थात् सहेट में प्रीतमके न आने के कारणों का तर्क वितर्क कर चिंतित और अधीर हो। यथा—

उत्का सोच सहेट में, क्यों नहिं आयो कंत।
रात जात सियरात सब, पिय बिलमें कहँ अंत॥

प्र०—विप्रलब्धा और उत्कंठिता में असल अंतर क्या है?

उ०—विप्रलब्धा नितांत निराश होजाती है और उत्कंठिताको कुछ कुछ आशा लगी रहती है।

६ वासकसज्जा

प्रिय मिलाप के निश्चय से केलि सामग्री सज्जित करने वाली। यथा—

वासकसज्जा सेज सज, पीय मिलन के काज।
सजी सेज पिय मिलन हित, सांझहिं तें तिय आज॥

७ स्वाधीनपतिका

पति जिसके सदा स्वाधीन रहे। यथा—

स्वाधिनपतिकाके रहत, पिया सदा आधीन।
पिय आपुहि अन्हवाय तिय, सकल सिंगारहु कीन॥

८ अभिसारिका

प्रिय संगमार्थ संकेतस्थल में जानेवाली वा प्रियको बुलाने-वाली। यथा—

अभिसारिक बुलवै पियहि, कै आपुहि चलि जाय ।
करि सिंगार भूषण पहिरि, तिया चली हरषाय ॥

इसके तीन भेद हैं:—

(१) कृष्णाभिसारिका–अंधेरीरातिमें अभिसार–श्याम वा नीलवस्त्रपरिधाना ।

(२) शुक्लाभिसारिका–चांदनी रात्रि में अभिसार–शुक्ल वस्त्र परिधाना ।

(३) दिवाभिसारिका–दिन में अभिसार–रजत वस्त्र परिधाना ।

किसी किसी ने संध्याभिसारिका भी मानी है परंतु यह बहुमत नहीं है ये तीनों भेद परकीया में ही घटित होते हैं । स्वकीया का अभिसार तो धर्मानुसार है उसमें दिवस वा रात्रि के वर्णन की आवश्यकता नहीं है । सामन्या का अभिसार खुले खजाने है उसमें भी रात वा दिन का कहना व्यर्थ है ।

९ प्रवत्स्यतपातिका

प्रीतम जिसका विदेश जाने चाहता है । यथा—

प्रवसितपतिका सोइ, चलन चहत परदेश पिय ।
रही विकल हिय रोइ, भोरहिं तें पिय गमन लखि ॥

१० आगतपतिका

प्रीतम के विदेश से आने पर प्रसन्न । यथा—

आगतपतिका मुदित बहु, बहुरत पिय परदेश ।
सुनि आगम पिय तरकिगे, बंद कंचुकी बेस ॥

प्र०—क्योंजी कहीं कहीं आगमिष्यतपतिका और पतिस्वाधीना द भेद और भी देखने में आते हैं आपने क्यों नहीं लिखे ?

उ०—प्रियवर! आगमिष्यतपतिका (जिसका पति आनेवाला हो) भेद आगतपतिका के ही अंतर्गत है और पतिस्वाधीना (पति के स्वाधीन हो) स्वकीयांतर्गत है बहुमतानुसार ये दोनों भेद अलग मानना निरर्थक है ।

प्र०—क्या वासकसज्जा भी रोती है? गीतगोविन्द के ६ठे सर्ग के ७वें श्लोक में तो ऐसा पद है:—

भवति विलम्बिनि विगलित लज्जा ।
विलपति रोदिति वासकसज्जा ॥

उ०—लक्षणानुसार वासकसज्जा को प्रीतम के मिलापका निश्चय रहता है इसीलिये वह सकलशृंगार और केलिसामग्री तय्यार रखती है। परंतु पूज्यपाद महानुभाव श्री जयदेव कविने जो ये पद लिखे हैं सो भी अशुद्ध नहीं हैं। प्रीतम का मिलाप तो नायिका के हृदय में निश्चित है परंतु किसी कारण से प्रीतम न आसका तो वह उत्कंठा से यदि चिंतित और अधीर होकर रोवे तो आश्चर्य्य नहीं। ऐसी दशामें रोना भी स्वाभाविक ही है इसी सर्ग के अंत में आप देखिये तो आपको स्पष्ट ज्ञात होगा कि गीतगोविन्द में वासकसज्जा का यह वर्णन उत्कंठिता सहित है।

प्र०—क्यों जी! परकीया और सामान्या में भी प्रोषितपतिका, स्वाधीनपतिका, प्रवत्स्यत्पतिका, तथा आगतपतिका में पतिका शब्द क्यों लगा है? पतिका तो वही हो सक्ती है जिसका पति हो।

उ०—इसका अर्थ प्रसंगानुकूल ऐसा समझना चाहिये:—

स्वकीया में विधिवत् विवाहिता पति— पति

परकीया में उपपति— पति

सामान्या में वैशिक— पति

प्र०--क्यों जी ! परकीया का प्रेम तो गुप्त होता है उसमें अपनेही घरमें खंडिता, कलहांतरिता, वासकसज्जा, आगतपतिकादि भेद कैसे साध्य हो सक्ते हैं ?

उ०—घरसे अभिप्राय उस गुप्त स्थान का है जहां भेंट हो वा भेंट होने की संभावना हो।

सूचना--संस्कृत साहित्यकारोंने आठ विधही नायिका मानी हैं प्रवत्स्यत्-पतिका और आगतपतिका के भेद नहीं माने हैं भाषाभूषण में ९ विधनायिका कही हैं आगतपतिका नहीं कही परंतु बहुमत तो १० विधनायिका का ही है-रसकुसुमाकर में सामान्या के १० विधि भेद मानकर भी उनका वर्णन अश्लील कहकर छोड़ दिया है। जब स्वकीया और परकीया में दसों भेद कहे तब सामान्या के दसों भेद कहने में क्या अश्लीलता रही सामान्या के दशविध भेद अनेक सत्कवियों ने कहे हैं और यह सर्व्व सम्मत है। यह तो वाग्विलास है, हां कथन में कोई वात अश्लील न चाहिये।

प्र०—धीरादि और खंडिता में क्या अंतर है ?

उ०—धीरादि भेद वे हैं जहां साधारण चिन्ह देखकर नायिका मान करे। यथाः—

निश्चय रति प्रगटै नहीं, सो साधारण जान। अर्थात् संदेह मात्रहो।

साधारण चिन्हः—

पाग छुटी दृग अरुणाई, आलस आदिक भेद।
ये साधारण चिन्ह हैं, जानि लेहु बिन खेद॥

खंडिता भेद वह है जहां असाधारण चिन्ह देखकर कुपित हो। यथा काव्यप्रभाकरेः—

चिन्ह असाधारण प्रगट, जानि खंडिता हेत।
खंडिताहि में धरत हैं, जे कवि बुद्धि निकेत॥

असाधारण चिन्हः—

दमन पीक अंजन अधर, नख रेखादिक और।
चिन्ह असाधारण विषै, बरणत कवि सिर मौर॥

पुनः

पिय आवै कहुं रैनि बसि, प्रात खंडिता गेह।

प्र०—क्या १० विध नायिकायें परकीयांतर्गत ऊढ़ा, अनूढ़ा भेद भी होते हैं।

उ०—ऐसा साहस अनूढ़ा में नहीं, कविजन केवल परकीया (ऊढ़ा) का ही वर्णन करते हैं।

स्वयंदूतिका

स्वयंदूतिका दूतपन, करहि जु अपने काज।
मग दुर्गम कारी निशा, पथिक बसहु इत आज॥
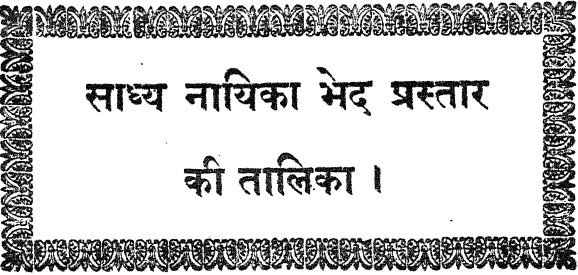
प्र०—स्वयंदूतिका तो उद्दीपन विभावान्तर्गत है फिर नायिकाभेद में क्यों मानना ?

उ०—दूती प्रकरण निस्संदेह उद्दीपन विभावान्तर्गत है दूती तीन प्रकार की कही गई हैं उत्तमा, मध्यमा और अधमा, परन्तु स्वयं दूतित्व तो स्वयं नायिका परही घटित होता है इसलिये इस भेद को केवल परकीया नायिका में ही मानना उचित है।

प्र०—स्वयंदूतिका और वचनविदग्धा में क्या अंतर है ?

उ०—स्वयंदूतिका अपरिचित पुरुष परदेसी वा पथिकप्रति कहती है। वचन विदग्धा परिचित पुरुषप्रति इशारे से कहती है।

आगे नायिका भेदों की एक तालिका लिखते हैं:—

साध्य नायिका भेद प्रस्तार
की तालिका ।

प्रस्तार की तालिका ।

क्रिया		स्वभाव						
रतिप्रीता	आनंद सम्मोहिता	अन्यसुरतदुःखिता	रूपगर्विता	प्रेमगर्विता	मानवती ३	स्वयंदूती	१ प्रोषितपतिका, २ खंडिता, ३ कलहांतरिता, ४ विप्रलब्धा, ५ उत्कंठिता, ६ वासकसज्जा, ७ स्वाधीनपतिका, ८ अभिसारिका (मु० म० प्रौढ़ा में १ परकीया में ३), ९ प्रवत्स्यत्पतिका, १० आगतपतिका	कुल
०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	०	०	०	०	०	०	१०	१४
०	०	०	०	०	०	०	१०	१७
१	१	१	१	१	३	०	१०	२५
०	०	१	०	०	०	१	१२	३७
०	०	०	०	०	०	०	१०	११
१	१	२	१	१	३	१	५२	[illegible]

व्याख्या

(गुप्ता ३)

१ भूत, २ भविष्य, ३ वर्तमान ।

(विदग्धा २)

१ वचन, २ क्रिया ।

(अनुशयाना ३)

१ वर्तमान सं० वि०, २ भावी सं० वि०, रमणगमना ।

(मानवती ३)

१ लघु, २ मध्यम, ३ गुरु ।

(अभिसार ३)

१ दिवा, २ शुक्ला, ३ कृष्णा ।

प्रस्तार

नायिका और नायक भेदोपभेदों का प्रस्तार स्थिर करना एक जटिल और वादग्रस्त विषय है इस विषय में कवियों के अनेक मतभेद हैं जो पहिले कह आये हैं उनका एकत्रही एक कोष्ठक नीचे दिया जाता है।

	मुग्धा	मध्या	प्रौढ़ा	परकीया	सामान्या	कुल
रसिकप्रिया	९६	९६	९६	४८	२४	३६०
साहित्यदर्पण	२४	१४४	१४४	४८	२४	३८४
रसमंजरी	७२	४३२	४३२	१४४	७२	११५२
रसप्रबोध	९६	९६	९६	५७६	२८८	११५२
ल०विनोद	९६०	२४०	४८०	१४४०	१२०	३२४०
का०प्रभाकर	८६४	९३६	१२९६	७५६	९३६	४७८८
रसिक प्रिया की टीका—ठीक पता नहीं लगता						६२५२
लाक्षणिक सहित साध्य भेद	१८	१७	२५	३७	११	१०८

सब से अधिक प्रस्तार भेद सरदार कवि ने रसिकप्रिया की टीका में किया है अर्थात् ६२५२, उससे कम काव्यप्रभाकर में कहे हैं परन्तु गणित करने से इससे भी अधिक भेद हो सकते हैं। काव्यप्रभाकर में परकीया के ऊढ़ा अनूढ़ा को मुख्य भेद मानकर गुप्तादि के भेद एकही हिसाब में लिये हैं यदि ऊढ़ा के छै भेद और अनूढ़ा के छै भेद अलग माने जावें तो परकीया के ७५६ के बदले ९०० भेद होंगे यथा—

परकीया १० दशा भेद +३ अन्यसुरतदुः, मान, गर्विता=१३+६ ऊढ़ा के गुप्तादि+६ अनूढ़ा के गुप्तादि=२५×३ दिव्यादि=७५×४ पद्मिन्यादि =३००×३ उत्तमादि=९०० इस हिसाब से ४७८८ के बदले ४९३२ भेद हो सकते हैं। इस गणना में भी विस्तारभय से आंतरिक उपभेद छोड़ दिये गये जैसे गुप्ता ३, विदग्धा २, अनुशयाना ३, अभिसारिका ३ इत्यादि। इन्हीं अड़चनों को लक्ष्य में रखकर संस्कृत साहित्यकारों ने यह कहा है—

क्वचिदन्योन्य साङ्कर्य्य मासां लक्ष्येषु दृश्यते।
इतरा अपि संख्या स्तानोक्ता विस्तर शंकया॥

अर्थात् परस्पर मेलन से और भी अनेक भेद हो सकते हैं परन्तु वे विस्तारभय से नहीं कहे गये ।

पुनर्विचार करने से साध्य भेद केवल १०८ निकलते हैं जो सब भेदों के अंत में लिखे हैं और उनकी एक तालिका भी अलग लिख दी है। असाध्य भेद लेकर प्रस्तार बढ़ाने से कुछ लाभ नहीं । काव्यप्रभाकर से दिव्यादि तथा पद्मिन्यादि भेद निकाल देवें तो बहुत कम भेद रह जाते हैं।

दिव्यादि भेद

दिव्या, अदिव्या और दिव्याऽदिव्या ये तीन भेद नायिकाओं के कहे हैं:—

दिव्य देव तिय बरणिये, नारि अदिव्य बखान ।
देव तिया भुवि अवतरीं, दिव्याऽदिव्य सुजान ।।

दिव्या-जैसे=इन्द्राणी, पार्व्वती, सीता, राधा ।
अदिव्या=लौकिक स्त्री ।
दिव्याऽदिव्या जैसे=द्रौपदी, अहल्या ।

रससिद्ध पद्माकर और मतिराम कवि ने दिव्यादि भेद नहीं माने हैं। यथार्थ में ये तो पौराणिक मत है इनको नायिका भेदमें मानना निरर्थक है इनके मानने में कोई रस नहीं ।

उत्तमादि ३ भेद

उत्तमा, मध्यमा और अधमा की व्याख्या पहिले लिख चुके हैं। ये भेद मुग्धा (विश्रब्ध नवोढ़ा), मध्या और प्रौढ़ा में ही घटित होते हैं ये तीनों भेद स्वतंत्र हैं अन्योन्य परिपोषक नहीं । प्रत्येक दशा भेद में इन्हें लगाना असंगत है यथा-उत्तमा खंडिता, मध्यमा खंडिता वा अधमा खंडिता कहना व्यर्थहै । परकीया में तो ये भेद माननाही नहींचाहिये। क्या कोई कह सकता है कि यह उत्तमा कुलटा है वा मध्यमा कुलटा है वा अधमा कुलटा है, वैसेही गणिका में भी इन भेदों का मानना निस्सार है ।

प्र०—मुग्धा अज्ञातयौवना और मुग्धा ज्ञातयौवना नवोढ़ा में उत्तमादि भेद क्यों न मानना चाहिये ?

उ०—इन दोनों में लज्जावशात् बोलने का साहस नहीं इससे उत्तमादि गुणों की परीक्षा नहीं हो सक्ती । प्रमाण—

भले बुरे सब एक से, जौलौं बोलत नाहिं ।
जान परत हैं काक पिक, ऋतु वसंत के माहिं ॥

प्र०—प्रकृति और स्वभाव में क्या अंतर है ?

उ०—यों तो दोनों शब्द एकही अर्थ के बोधक हैं अंतर इतना ही है कि प्रकृति देहजन्य होती है जो पलटती नहीं है और स्वभाव देश-कालानुसार पलटता रहता है ।

पद्मिन्यादि ४ भेद

पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी, हस्तिनी, ये चारों भेद तो कोकशास्त्र के हैं नायिका भेद में इनको मानना निरर्थक है। इनके मानने में कोई रस नहीं ।

नायक

नायक की व्याख्या क्या है ?

नायक गुण मंदिर युवा, युवती रीझहिं देख ।
ललकि रहीं ब्रजनायिका, निरखि श्याम को भेख ॥

नायक के तीन भेद हैं पति, उपपति और वैशिक ।

(१) पति

विधिवत् पाणिग्राहकः पतिः अर्थात् विधिपूर्व्वक विवाहित पुरुष पति है । पतिके चार उपभेद हैंः—

(१) अनुकूल—अनुकूल एक निरतः । यथा—राम ।

निज पतिनी में रत सदा, सो अनुकूल बखान ।
धन्य राम जिन जग सदा, एक तियाव्रत ठान ॥

(२) दक्षिण—अनेक महिलासुसमरागो दक्षिणः । अनेक स्त्रियों पर तुल्यानुरागी । यथा—श्रीकृष्ण ।

बहु नारिन को सुखद सम, सो दक्षिण पति जान ।
मनमोहन ब्रजतियन पै, राखत प्रेम समान ॥

(३) धृष्ट—भूयोनिशंकः कृत दोषोपिभूयो निवारितोपिभूयः प्रश्रय परायणो धृष्टः । यथाः—

धृष्ट कलंकी निलज पुनि, करै दोष निःशंक ।
ज्यों ज्यों बरजति ताहि तिय, त्यों त्यों लागत अंक ॥

(४) शठ—कामिनी विषय कपट पटुः शठः । यथाः—

शठ साधत निज काज, मुख मीठो हिय कपटमय ।
प्यारी गारी आज, मिसरी तें मीठी लगैं ॥

(२) उपपति

आचार हानिहेतुः पतिरुपपतिः अर्थात् परदारानुरक्त पुरुष, जार । यथाः—

उपपति ताहि बखानहीं, जो परतिय के मीत ॥
ब्याह प्रथा जिन निरमई, करी बड़ी अनरीत ॥

(३) वैशिक

बहुलवेश्या भोगोपरसिको वैशिकः । यथाः—

वारवधुन को रसिकसो, वैसिक अलज अभीत।
बहुत फजीहतहू भये, तजत न गणिका प्रीत ॥

प्र०—क्या अविवाहित पुरुष भी उपपति हो सकता है? जबतक उसका विवाह नहीं हुआ तबतक उपपति कैसे होगा?

उ०—विवाह होने या न होने से कोई संबंध नहीं। परदारानुरक्त पुरुषही उपपति है।

प्र०—तो क्या श्रीकृष्ण भी उपपति हैं?

उ०—कदापि नहीं, वे परदारानुरक्त नहीं। उनमें जार कर्म्मकी संभावना ही नहीं। पुराणों का यह कथन तो प्रसिद्धही है:— "अन्ये चांश-कला प्रोक्ता, कृष्णस्तु भगवान्स्वयम्"। हां वे दक्षिण नायक हैं जो अनेक नायिकाओं से समान प्रीति रखते थे। उनमें व्यभिचार लेशमात्र भी नहीं। वे तो योगेश्वर हैं। वे लीला पुरुषोत्तम हैं उनकी लीलाओं का पारावार नहीं, उनका कोई चरित्र वा कोई लीला महत्व वा शिक्षा से खाली नहीं। उन्होंने रासलीला तथा अन्य विलासादि गोपियों की इच्छा तथा प्रार्थनानुसार किया था। गोपियों को सदा सदुपदेश देते रहे। जब गोपियों को गर्व हुआ तब अंतर्धान होकर शिक्षा भी दी। यदि मानवी दृष्टि से भी देखो तो चीरहरण के समय उनकी आयु ७ वर्ष की थी और रास लीला के समय वे ८ वर्ष के थे इतनी अल्पावस्था में व्यभिचार असंभव है। गोपियां उन्हें प्राणों के समान प्यारा समझती थीं इसीलिये श्रीकृष्णका नाम गोपिकावल्लभ भी है अर्थात् गोपियों के प्राणप्रिय।

यदि व्यभिचार होता तो गोपगण अप्रसन्न होकर श्रीकृष्ण पर नानाप्रकार का दोषारोपण करते परन्तु वे तो अत्यन्त प्रेम रखते थे। पुनः यदि किंचित् भी व्यभिचार होता तो उनसे गोपियों को अवश्य संतान भी उत्पन्न होती सो भी बात नहीं है। श्रीकृष्ण तो केवल भक्ति के आधीन हैं। भगवद्गीता में स्पष्ट कहा है—

ये यथामां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

गोपियों के प्रेम का रहस्य अत्यन्त गूढ़ है । वे तो वेद की ऋचायें हैं । कृष्णभगवान से पृथक् होही नहीं सकतीं । ऋषियों और देवताओं की पत्नियों ने भी राधाकृष्ण की सेवा के निमित्त गोपियोंका जन्म ग्रहण किया था और वे नित्य यौवना थीं । यहां इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि गोलोक और वृन्दावन में श्रीकृष्ण की पत्नी श्रीराधिकाजी थीं, वैकुंठ में श्रीलक्ष्मीजी, द्वारिका में रुक्मिण्यादि आठ प्रधान रानियां थीं और इनके सिवाय १६१०० कन्यायें नरकासुर से उद्धार कर एक साथही विवाही थीं।

प्र०—क्योंजी राधिकाजी से तो रमण होता था उनके संतान क्यों नहीं हुई ?

उ०—यह प्रश्न नायिका भेद से संबंध नहीं रखता, अन्य देवियों के साथ राधिकाजी को भी अनपत्यता का शाप था । अनपत्यता का क्या अर्थ है ? संतानाभाव अर्थात् संतान न होना ।

प्र०—क्योंजी ! पतिके आपने ४ उपभेदही लिखे हैं । अनभिज्ञ को क्यों नहीं लिखा ?

उ०—यह पहिलेही लिख आयेहैं कि अनभिज्ञनायक, नायक का आभास मात्र है उसमें अनभिज्ञता के कारण यथार्थ नायकत्व नहीं है । यथाः—

नहिं बूझत अनभिज्ञ है, नारि विलास अनेक ।
करि हारी सब जतन तउ, बलम न समुझै नेक ॥

साहित्य ग्रंथों में नायक भेद यों पाये जाते हैं—

	पति	उपपति	वैशिक	कुल
रसिकप्रिया	४	—	—	४
सा० द०	१६	१६	१६	४८
रसमंजरी	१०	२	६	१८
रसप्रबोध	१४४	१०८	७२	३२४
ज० विनोद	४८	४८	४८	१४४
का० प्र०	१०	४	२	१६
रसराज	१६	४	४	२४
जगद्विनोद	१७	४	४	२५
रसकुसुमाकर	१०	४	२	१६

जगद्विनोद का मत अर्थात् २५ भेद मानना सर्व्वोत्तम प्रतीत होता है इसका उल्लेख पहिले ही हो चुका है अतएव दुहराने की आवश्यकता नहीं।

माननीय नायक भेद

(१) पति ४ (अनुकुल, दक्षिण, धृष्ट, शठ) × ४
मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर, प्रोषित = १६
+ अनभिज्ञ १
१७
(२) उपपति १×४ (मानी, वचनचतुर, क्रियाचतुर प्रोषित) = ४
(३) वैशिक १×४ (तथा) = ४
कुल २५

व्यंग्य दर्पण

व्यंग्य का विषय बहुत गूढ़ और विस्तृत है इसका सम्यक ज्ञान उत्तम ग्रंथों के पठन पाठन तथा अनुभविक साहित्यानुरागी सज्जनों की सत्संगति से प्राप्त होता है। रसात्मक कविता में व्यंग्य जीव के समान है व्यंग्यमयी कविता अत्यन्त मनोहर दूध में शक्कर के सदृश है व्यंग्यार्थ को जानने और समझने में बुद्धि भी तीव्र होती है और विलक्षण आनंद प्राप्त होता है। व्यंग्य, लक्ष्यार्थ को और भी पुष्ट करता है अर्थात [illegible] हुई किसी गूढ़ बात को प्रगट करता है नायिका भेदों के ग्रंथों में व्यंग्य [illegible] विशेषता रहती है जिसे प्रवीण पाठक तो जानते ही हैं परंतु नवीन [illegible] को कहीं कहीं शंका हो जाती है एतदर्थ उनके हितार्थ व्यंग्य का भी [illegible] वर्णन करते हैं संस्कृत में तो इस विषय के एक से एक बढ़कर ग्रंथ हैं परंतु हिन्दी भाषा में व्यंग्यार्थ कौमुदी और बृहद्व्यंग्यार्थ चंद्रिका अच्छे ग्रंथ हैं उन्हीं के आधार से संक्षिप्त रीति से यहां कुछ उदाहरण लिखते हैं। [illegible] (विशेष करके कवित्त वा सवैयों के) चार पदों में से प्रथम के तीन पद तो केवल भाव के पोषक होते हैं और असल आशय चतुर्थ पद के ही अंतर्गत रहता है इसीलिये इनको दो बार कहने वा पढ़ने की प्रथा है। स्थूल भेद तो चतुर्थ पद से ही समझ में आ जाता है परंतु सूक्ष्म (आंतरिक) भेद के लिये कहीं

कहीं चारों पदों की अपेक्षा रहती है। हमारा उद्देश्य नवीन पाठकों को व्यंग्य की प्रचलित शैलीका दिग्दर्शनवत् केवल साधारण ज्ञान ही बोध करा देने का है इसलिये विस्तारभय से चुने हुए चतुर्थ पद ही लिखकर उसी के नीचे संक्षिप्त व्याख्या लिख दी है, चतुर पाठक इसी से समझ लेंगे।

स्वकीया

देखी अनोखी नई नवला यह काहे तें चित्र विलोकति नाहीं।

नायिका को देखकर सखी की उक्ति—अन्य पुरुष की बात तो दूर है नायिका अपने पति के सिवाय दूसरे पुरुष के चित्र तक को नहीं देखती।

कौन सुभाव री तेरो पर्‌यो बर पूजत काहे हिये सकुचाति है।

सखी की उक्ति नायिकासे—वट वृक्ष का नाम भी बर है और बर नाम पति का भी है इसलिये निज पति को छोड़ अन्य को नहीं पूजना चाहती।

मंजुल मंजरि पै हो मलिन्द बिचारि कै भार सम्हारि कै दीजियो।

सखी की उक्ति नायक से—मंजुल मंजरी से अभिप्राय मुग्धा का है।

कौन परी यह बानि अरी नित नीर भरी गगरी ढरकावे।

सखी की उक्ति नायिका से—नायिका अज्ञातयौवना है नेत्रों के प्रतिबिंब को भ्रम से मछली समझकर पानी ढरकाय देती है।

आजु सरोवर में सजनी जल भीतर पंकज फूल निहारे।

नायिका की उक्ति सखी से—नेत्रों के प्रतिबिंबमें कमलका भ्रम। (अज्ञातयौवना)

इत उत हेरि के सहेलिन की चोरी करि ललज निहारि निज
नैननि लखति है।

सरोवर में कमल को देखकर अपने नेत्रों का प्रतिबिंब जल में इसलिये देखती है कि कमल के समान मेरे नेत्र भी हैं वा नहीं (ज्ञात यौवना)

देखत देखि सखी जनको किहि कारण बाल हिये सकुचाई ।

अपने यौवन की छाया देख रही है सखियों को देखकर लजाय रही (ज्ञा० यौ०)

पीठि दै लुगाइन की डीठिहिं बचाय ठकुराइन सो नाइन के पायन परति है ।

अभिप्राय यह कि कल तो लेही गई थी आज फिर पतिके पास न ले जावे (नवोढ़ा)

पै किहि कारण बालमके ढिग बाल अली कर छोरत नाहीं ।

अली के साथ पति के पास तक तो गई परंतु सखी का हाथ नहीं छोड़ती इस भय से कि कहीं पति के पास न छोड़ जावे (विश्रब्ध नवोढ़ा)

मध्या

काहे को केलिके मंदिर में सुकसारिका राखत प्रीतम प्यारे ।

सुकसारिका (तोता मैना) केलिके मंदिर का सब भेद गुरुजनों से कह देंगे इसलिये सकुचती है ।

हौं हरि हारी हहा करिकै टुक नूपुर क्यों पहिरै नहिं पायन ।

सखी की उक्ति—नूपुर का शब्द सब गहनों से अधिक होता है, रति का भेद सखियां जान जायँगी ।

प्रौढ़ा

काहेते होंहिं दुखी मनमाहिं सँजोगिनि और वियोगिनि दोऊ ।

प्रातःकाल होने लगा पिया से वियोग होगा इसलिये संजोगिन दुखी हुई, वियोगिनि तो दुखी है ही ।

रतिप्रीता

मोह मयी मुकुतान के मंजुल काहे तें हार उतारन लागी ।

प्रातःकाल होने लगा मोती सियरे (ठंडे) होजायँगे उन्हें देखकर पिया भी सिधार जायँगे इसलिये हार उतारकर धर लिया जिससे पिया को प्रभात सूचित न होने पावे ।

हाय दई किहि कारन ये सिगरे पुरलोग बिड़ाल न पालैं ।

मुरगा के बोले स्वपति, प्रात जानि उठिजाय ।
पालैं सकल बिलाव तो, सकल शंक सियराय ॥

बिड़ाल = बिलाव ।

पाठान्तर (चतुर्थ दल) "चरणायुध न रहाय" परंतु मुरगा और चरणायुध में पुनरुक्ति दोष है ।

आनंद सम्मोहिता

क्यों सखि सांवरि नारि बिभावरि बावरि लौं पति के सँग सोई ।

पति संगम आनन्दतें, भई विमोहित नारि ।
बिभावरी = रात्रि, लौं = समान ।

मध्या धीरा

सुघर बिचारि कलानिधि को निहारि मनुहारि करि फेरि मुख पीतम चितै रही ।

व्यंग्य यह कि जैसे चंन्द्र कलंकित है वैसेही नायक का मुख भी चिन्हित है ।

रीति नयी रितु पावस में ब्रजराज लखे रितुराजसो लागत ।

नायिका की उक्ति-भावस में ब्रजराज के शरीर पर (ऋतुराज) वसंत के समान अनेक हरे पीले लाल चिन्ह हैं।

घन ये नभ मंडल में छहरैं घहरैं कहुं जाय कहूं ठहरैं।

नायिका की उक्ति-पति कहीं तो कह जाते हैं और कहीं रमण करते हैं।

प्यार सों पीतम के उर में हँसि गुंजन के गजरा पहिरायें।

गुंजा का मुख श्याम और शेष अंग लाल होता है, नायकके तन पर काजल की श्यामता और महावर के लाल चिन्ह देखकर व्यंग्य से हँसकर गुंजमाल पहिना दी।

हौ तुम नीति निधान पिया परमारथ स्वारथ साधत दोऊ।

नायिका की उक्ति-परतिय गमन परमार्थ और घरमें आगमन स्वार्थ।

मध्या अधीरा

लेकर मालति को मकरंद फिरै मद मत्त मलिंद मजेजन।

नायिका की उक्ति-भँवर की निंदा से नायक की निंदा-मालती को मकरंद-अन्य स्त्री से रति।

मध्या धीराऽधीरा

आजु प्रभात समै लखिये अरविंदनतें मकरंद हुन्यो परै।

सखी की उक्ति-नेत्रों से आंसू ढलक रहे हैं।

प्रौढ़ा धीरा

ह्वै करि निसंक क्यों मयंक मुखी आजु परजंक पर जाति पिय अंक न भरति है।

सब बात रस की करती है परंतु पिय को अंक नहीं लगाती।

प्रौढ़ा अधीरा

घालिय ना इन फूलन की पखुरी कहुं अंगन में गड़ि जैहै ।

नायक बहुत सुकुमार हैं फूलों की छड़ी से न मारो कहीं फूलों की पखुरी अंग में न गड़ जाय (तर्जन)

प्रौढ़ा धीराऽधीरा

कौन सयानप है तिनमें करि कै मन मान मनाये जे मानतीं ।

नायिका नायक से कठोर वचन कह कर जनाती है कि मैं नहीं मानूंगी ।

आजु कपोत कलेस भरे कत बोलत हैं बलि बायस बैना ।

कपोत से अभिप्राय प्रौढ़ा नायिका, बायस बैना से अभिप्राय कठोर बचन ।

प्रेमगर्विता

जोरि सनेह सदाशिव ने कह जानि तिया अरधंग धरी है । १
जाइबो बेगि लिवाइबो मोहिं सुहात नहीं परभात को पानी । २
धनि वेधन हैं तिनके लहने पहिरैं गहिने नित अंगन में । ३
और तो मोहि सबै सुखरी दुखरी यहि मायके जान न देत है । ४

१ स्पष्टही है ।
२ पानी लाने के लिये भी नहीं जाने देते ।
३ पति से अलग होने ही नहीं पाती कि गहने पहनूं ।
४ पति क्षणभर भी तो नहीं छोड़ता ।

रूपगर्विता

रीझवारी एरी सुन सुंदर सुजानवारी भाल क्यों न बेंदी मृग मद की लगाई तैं । १

किहि कारन बैर परी हमरे सुकसारिका बोल न बोलति हैं। २
कौन हेत होत बिपरीत इन ग्रोसनि में बैठों जिहि भौन दासी
दीप दरसावैना। ३
नंदकिसोर अहो चित चोर न जाउँ मैं न्हान सरोवर ओरन। ४
बूझति तोहि सुनावरी मोहिं सुकाहेतें फूल मिलैं नहिं हेरे। ५
छोड़ि सबै अरविन्द मलिंद रहैं निसि वासर मोघर घेरे। ६
चंदमुखी कहे होतीं दुखी तौ न कोऊ कहैगो सुखी रहिबो करो। ७

१ कलंकित नहीं बनना चाहती।
२ (नेत्र की शोभा देखकर खंजन) और नासिका की शोभा देख कर सुकसारिका उदास हैं।
३ मुखचन्द्र का प्रकाश इतना तेज है कि प्रकाश के भ्रम से दासी दीप नहीं धरती।
४ मेरा मुखचंद्र देख कमल संकुचित हो जायँगे और कोक (चकवा चकई) का वियोग हो जायगा।
५ मुख को चंद जानि कमल संपुटित हो गये।
६ पिया मेरे ही रूप पर मोहित हैं।
७ कलंकित चन्द्र के समान मुख कहने से दुख होता है।

मानवती

मैन महीपति को फरमान लै आयो बसंत रसाल के बौरन।

सखी मान मनाती है-अब बसंत ऋतु आई है, यह ऋतु रूस रहन की नाहीं।

पूरनिमा निसि कातिक की यह भादव की सुदि चौथ नहीं है।

हास्य वचन कहि सहचरी, मान छुड़ावति तासु।

कातिक पूनों में ही तो प्रिय से मिलने में आनंद है भादव सुदी चौथ का चन्द्र तो कलंकित है।

अन्यसुरतदुःखिता

देखे अपूरब नीखे नये मनरंजन खंजन मीन किये हैं ।

हे सखी तेरे नेत्रों का अंजन छूट गया है इस कारण तेरे नेत्र खंजन और मीन के समान उज्ज्वल होगये हैं अंजन छूटगया है तू मेरे पति से रमण करके आई है ।

फेरि परे कछु द्योसन को तब है प्रतिकूल करै छल छांहीं ।

नायिका की उक्ति—उस सखी से जो नायिका के पतिसे रमण करके आई है—दिनों के फेर से सदासंगिनी छांह भी दगा दे जाती है । यथार्थ में छाया भी अंधेरी रात्रि में संग छोड़ देती है ।

कोटिन उपाय करि देखो नित कोऊ किन आप बिन आपहित पायो कहुं काहू बीर ।

दूती को मैंने अपने स्वार्थ के लिये भेजा सो अपना ही स्वार्थ कर आई ।

परकीया

मोहिं सखी निसि बासरहूं ऋतुराज तें लागत पावस नीकी ।

नायिका की उक्ति—बसंत में पत्ते झड़ जाते हैं पावस ऋतु में सब वृक्ष हरे और सघन होते हैं पर पुरुष मिलाप का अवसर अच्छा मिलता है (ऊढ़ा)

बूझति हौं सजनी कबहूं मनको अभिलाष दई कर देत है ।

प्रीतम से मिलाप की अभिलाषा (अनूढ़ा)

भूत गुप्ता

चोर चवाइन चातुरि ये हियरे को हरा अनतैं धरि आवैं ।

जिस पर पुरुष के साथ रमण हुआ वहां हार भूलि आई, मिथ्या आरोप अन्य पर लगाती है।

भविष्यगुप्ता

इनसों न उपाय चलै कबहूं पढ़ि मोहनी मंत्रसो डारति हैं।

जाना तो मनमें ठानही लिया है अन्य के मोहनी मंत्र के वशीभूत होने के मिस से भविष्य का जाना सूचित किया, ध्वनि यह कि हमें दोष न देना।

वर्तमान गुप्ता

या ब्रज में यह रीति बुरी घरमें धसि लोग लुगाइन लावें।

देखने वालों ने तो देख ही लिया केवल बात बना रही है।

ऐसी कौन हांसी बीर पुरुष पराये संग बार बार देखो हमें पार पार आती हैं।

स्पष्टही है।

क्रिया विदग्धा

कौन विचार विचारि वधू कलिका करि कै सजनी कर दीनो।

प्रीतम ने दूती के हाथ कमल का फूल भेज कर इंगित किया कि दिन में मिलो नायिका ने उसी को संपुटित कर दूती के हाथ में दे दिया इशारा यह है कि संध्या में मिलेंगे।

वचनविदग्धा

हमसों हमारो पति रूसो जो रहत तोपै तुमको परी है कहा पर घर बात की।

भूलत नाहिं परोसिनरी हमें प्रीतम को परदेस सिधारन।

व्यंग्य यह कि घर सूना है।

लक्षिता

कब की निहारति हौं नैननिसों कंजनैनि बेसर बनैना आजु
पहिरत काहेतें ।

अन्य स्त्री नायिका का पर पुरुष प्रेम ताड़ गई क्योंकि प्रीतम को देखकर नायिका को सात्विक कंप हुआ नथ पहिनते नहीं बनती । बेसर से अभिप्राय मित्र को देखने का भी है ।

इनकी उनसों जु लगी अखियां कहिये तो हमें कछु का परी है ।

स्पष्टही है ।

मेरे बूझत बात तू, कत बहरावति बाल ।
जगजानी विपरीत रति, लखि बिंदुली पिय भाल ।

स्पष्टही है ।

कुलटा

चहुं ओरन तें गन भौंरन के इक मालती पर मड़रात फिरैं ।

स्पष्टही है ।

पहिले अनूढ़ा भई ब्याहे पर ऊढ़ा भई गौने में नवोढ़ा ह्वै के पीके
साथ सोई है ।

स्पष्ट है ।

अनुशयाना पहिली (वर्तमान संकेत विघट्टना)

कैसे हैं या पुर के जन ये बन बागन त्यागि तड़ाग बनावैं ।

बन बागन में जैसे संकेत स्थलका सुअवसर मिलता है वैसे तालाबों में नहीं ।

अनुशयाना–दूसरी (भावी संकेत नष्टा)

जनि सोच करै चलु चायन सों ससुरे महँ नैहर सो सुख है।

सखी की उक्ति नायिका से–सोच न कर ससुरे में भी बहुत मौके मिलेंगे।

अनुशयाना तीसरी (रमणगमना)

मोहन के अधरान धरी हठि वैर परी यह वैरन वांसुरी।

सहेट स्थल में प्रीतम पहुंचगया नायिका को जाने का मौका नहीं मिलता इसलिये दुखी है।

मुदिता

भौंहनि फेरि तरेरि सुनैन सखी तन हेरि हिये सुख पायो। १
सौगुनी फूल हिये महँ राखि चितेरिन चौगुनी रीझ दिखाई। २
सो ननदी ससुरार सिधारत कारन कौन वधू सुख पायो। ३

प्रीतम से मिलने का अच्छा मौका हाथ लगा।

गणिका

और फूल सूल सम लागत निहारे मोहिं माधवी मधुर फूल ल्यावै क्यों न आली हेरि।

धनी की अपेक्षा।

प्रोषितपतिका

बाला प्रथम वियोगिनी, घरही घर पूछंत।
बलम पयाने ए सखी, बलिया हूं बाढ़ंत॥

पृ ६२ पंक्ति ६ में "अंधेरी रात्रि में" के बदले यों पढ़िये–"अंधेरे में"।

अपना दुबलापन तो नहीं समझ सकती, ऐसा समझती है कि चूड़ियां हीं बढ़ गई हैं । (मुग्धा)

भरि अंजुल मंजुल करन, सुरभित सुमन सुदेस ।
चितय गवरि तन सकुचि फिरि, देत चढ़ाय महेस ॥

आधा मदन आधी लज्जा -विरहाग्नि से हांथ ही में फूल जल गये भस्म हो जाने के कारण महेश को चढ़ा दिये (मध्या)

हंसन लौं हंस उड़ि जैहैं ऋतु पावसमें ऐहैं घनश्याम घनश्याम जो न ऐहैंरी ।

हंस = हंस, प्राण । लौं=समान-(प्रौढ़ा)

मारि मारि दादुर निकारि दूर देसनितें चोंचन उपारि ज्यों पपीहा पीव बोलैंना ।

पीव पीव की बोली सुन कर विशेष दुःख होता है (प्रौढ़ा)

समुझि सयानी मन सुंदरि सलोनी वाम सेज तें उतरि दूजी सेज पर बैठी आन ।

मित्र के विरहाग्नि से जल रही थी-इस अंदेशे से कि सेज के फूल कहीं सूख न जायँ और पति को भेद खुलजाये दूसरी सेज पर आय बैठी (परकीया)

सुंदर मंजुल मोतिन की पहिरो न भटू किन नाक नथूनी ।

विरह की गरम श्वास से मोती का पानी कहीं उतर न जाय, भेद खुल जायगा (परकीया)

खंडिता

कासों कहौं हीको दुख प्यारे निज पीको मोंहि लागत न नीको नित मिलिबो बिछुरिबो ।

जब देखो तब प्यारे पिया सापराध हैं न देखो तो जीव व्याकुल रहता है (स्वकीया)

लै चम्पक को फूल कर, पिय दीनो मुसुकाय।
समुझि सुघरि हिय में दियो, किंशुक फूल चलाय॥

नायक ने चंपा का फूल नायिका को दिया इशारा यह कि भँवर चम्पा (अन्य स्त्री) पर नहीं जाता। नायिका ने टेसू का फूल चलाकर यह सूचित किया कि तुम्हारे शरीर में महावर के लाल और काजल के काले चिन्ह हैं सो तो जरा देख लीजिये (स्वकीया)

द्वार खुले लखि लोगन के हठि क्यों निज द्वार किंवार लगाये।

प्रातःकाल प्रीतम को आते देख किंवार बंद किये इस भय से कि कहीं दूसरा या दूसरी देखि न लेवे (परकीया)

क्यों घर आवत पीतम को लखि बाल विभूषण छोरि धरै।

नवीन भूषण की अभिलाषा (गणिका)

कलहांतरिता

कही औरकी और करी जबतें तबतें निज नैननि देख परी।

कलह करके पछताती है।

विप्रलब्धा

झूठो सब जानि पर्‌यो कह्यो मुख बैननिको सांचो सब जानि
पर्‌यो नैननि के देखेको।

स्वयं कहगये और संकेत स्थल में न मिले।

उत्कंठिता

किहि कारन औचक बात कह्यो चटकावलि सोर सुन्यो सजनी ।

जोवत पति की बाटही, होय गयो परभात ।
चटकाहट सुनि चकित ह्वै, मुग्धा अति अकुलात ॥

सुंदर स्वच्छ सुगंध सन्यो मकरंद झरै अरविंद तें आली ।

प्रातःकाल होने में आया प्रीतम न आये मुखपर स्वेद कण झलक आये ।

वासकसज्जा

बेलि चमेलिन को तजि कै अलि काहे को कंजकली नितल्यात ।

कंज कली रात को मुरझा जाती है । बेली चमेली रात को फूलती हैं और इनसे सेज अच्छी सुहावनी लगती है, नायक का मन प्रसन्न होता है (प्रौढ़ा)

स्वाधीनपतिका

तो पति में इक बानि परी जु करी विधिने जग रीति प्रसून की ।

फूल की सुगंध फूलही में रहती है अर्थात् तेरे पति की दृष्टि तेरे ही में रहती है ।

पीय को कौन सुभाव पन्यो निसि बासर चोर चकोर चुगावत ।

चकोर चंद्रमासे ही प्रीति रखता है ।

बिन कारन ये तुम पै सजनी रजनी दिन सौति रिसानी रहैं ।

पीतम याके बस रहत, रह सब सौति रिसानि ।

अभिसारिका

बूझति तोहि सुनावरी मोहि जतावरी केतिक रैन गई है । १
चहुं ओरसों वानिकसों बनिकै वनमें बरही बहु बोलति हैं । २

सखी की उक्ति-कामोद्दीपन जताय अभिसार का मनोत्साह कराती है। (परकीया)

प्रवत्स्यत्पतिका

हँसि बोलत ना उठि डोलत ना कत बाट बिलोकत बादर की ।

बादर बरसें पिय रहैं, चाहति मुग्धा नारि (मुग्धा)

का गुन आजु प्रभात बड़े अलि फागुन रागमलार अलाप्यो ।

पति गमनत तिय रुष्टि हित, गावत रागमलार (मध्या)

जाय इकंत ह्वै कंत निहारि बनाब बसंत नयो दिखरायो ।

बसंत में गमन वर्जित (मध्या)

सुंदरि बैठि अगार के द्वार सुनील निचोल निचोवन लागी ।

अशकुन करके पिया का जाना रोकती है (प्रौढ़ा)

तजि मंद हँसी दुख फंद फँसी जिमि चंदमुखी दुति मंद भई ।

सखी ने उपपतिका विदेसगमन जताया (परकीया)

क्यों बिमनी रमनी इह जामिनि भूषण खोलि पिया सँग सोई ।

प्रात जाना चाहते हो तो जब नये भूषण लावोगे तभी पहनूंगी । (गणिका)

आगतपतिका

आजु सखी अथए दिन के सु कलानिधि देखि कुमोदिनि फूल है। १
बूझति तो कहँ बासरके कहुरी अब केतिक जाम गये हैं । २
कौन सुभावरी तेरो परयो खिन आंगन में खिन पौरि में आवत। ३
चित चाह चढ़े मन मोद बढ़े धुनि चातक आवत गावत से । ४

१, २, ३ में आगमिष्यतपतिका की ध्वनि है ।

४ में आगतपतिका जानिये ।

उत्तमा

का कहिये इनसों रजनी मकरंदहि लेत मलिंदहिं दूषतीं ।

स्वयं तो पतिको दोष नहीं देती, अन्य स्त्रियों कोभी दोष देने से बरजती है ।

मध्यमा

जीवन है तिनको धिक री गुन औगुन जे पिय के न पिछाने ।

गुण औगुण से मध्यमा ।

अधमा

है वह बारन जोग्य सुभाव करैं मनुहार निहारत नीके ।

पिया मनुहार कर रहा है यह भलीभांति देख कर भी रुष्ट है ।

अनुकूलपति

देखि परे खगराजन में इक सारस सांचे सिपारस लायक।

सारस की जोड़ी सदा एक संग रहती है।

दक्षिणपति

करिये बड़ाई कौन मधुप सुजान एहो सुमन समाजन में एकै रस रहिबो।

भँवर जो है वह कली कली का रस लेकर सबोंको एकसा आनंद देता है।

उपपति

देखे सुने सिगरे जग में लखिये सबतें अगरे गुन भौंर में।

भंवर अनेक जगह फिरता रहता है। जो जैसा होता है वैसाही गुण देखकर रीझता है।

वैशिक

सुन्दर स्वच्छ सुगंध सनी फुलवारिन में इक मालती नीकी।

मालतीसे अभिप्राय गणिका का है।

राधाकृष्ण प्रसादतें, पूर्ण भयो यह ग्रन्थ ।
सरस नायिका भेद को, सुगम लखावत पन्थ ॥
ग्रन्थ अनेकन देखिके, 'भानु' कीन्ह निरधार ।
भूल चूक जो होय कछु, सज्जन लेहु सुधार ॥

॥ शुभम्भूयात् ॥

प्रियवर ! यहां तक आपको व्यंग्यों का दिग्दर्शनमात्र करा दिया गया, यदि विस्तारपूर्व्वक देखना हो तो उपरोक्त ग्रंथ अवश्य देखिये, ये दोनों ग्रंथ (व्यंग्यार्थ कौमुदी और वृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका) भारतजीवन प्रेस काशी से अल्प मूल्य में मिल सकते हैं। हां यदि गहरे जाने की इच्छा हो तो हमारे रचित बड़े ग्रंथ काव्यप्रभाकर को देखिये उसमें सब रसों के व्यंग्य मिलेंगे यह ग्रंथ हमारे पास नहीं मिलता, बंबई के व्यंकटेश्वर प्रेस से प्राप्य है परन्तु इसका मूल्य ८) है। हमारे रचित छोटे ग्रंथ "काव्यप्रबंध" (मूल्य १=)) से भी व्यंग्यों का ज्ञान हो सकता है और वह इसी प्रेस में मिल सकता है।

अब इसके आगे हिंदी के नायिकाभेदों के ग्रंथों में जो कठिन शब्द जिस रूप से पाये जाते हैं उनका एक कोष अपने प्रिय पाठकों के हितार्थ लिखते हैं।

शब्द कोष

अ

अकस = ईर्षा, डाह
अकृत्रिम = असल, बेबनावट
अकैठे = इकट्ठा
अखिल = सम्पूर्ण
अगर = सुगंधित द्रव्य
अगाधा = अथाह
अगार = घर
अगोट = सामने
अचीते = अचानक
अछेह = निरन्तर
अजगुत = आश्चर्य
अटा = अटारी
अतरसों चौथे दिन
अतन = कामदेव
अत्र = यहां, अस्त्र
अतूल = निरुपमा
आंतक = भय
अथवत = अस्त होता है
अदली = [illegible]
अदाह = ताप
अध = नीचे
अनखि = गुस्सा होकर
अनजोखे = बिना तौले
अनत = अन्यत्र, अलग
अनतै = विदेश, अलग
अनल = अग्नि
अनंग = कामदेव
अनाकनी = टालदेना
अनातप = छांह
[illegible] = कोरदार, श्याम, कटीली
अनिल = पवन
अनेट = अनिष्ट, अनभल
अनी = नोक, फौज
अनीठ = खोटा, अनिष्ट
अनीन = समूह
अनीस = अनाथ
अनुरक्त = प्रेमी
अनुराग = प्रेम
अनुसारि = करके
अनुसारे = किये
अनूप = उपमारहित
अनेस = अँदेसा
अनैसी = अन्याय
अनोखे = अजीब, विचित्र
अपत = पत्र रहित, बिना प्रतिष्ठा
अपस्मार = मूर्छा
अबाती = आनेवाली
अब्ज = कमल
अभिराम = हर्ष से, सुन्दर
अभीरिन = अहीरिन
अमनैक = न माननेवाला, हठीला
अमान = बेहद, असह्य
अमी = अमृत
अमेजे = मेल
अमेली = मेलरहित
अमोघ = ठीक, चूकरहित
अरगट = अकस्मात्
अरगजा = सुगंधित जल
अरविन्द = कमल
अरसि = आलसयुक्त

अरसौली = हठी, दर्पण प्रेमी
अरसै = अरुकने लगै
अर्क = सूर्य्य
अराति = रिपु
अराल = घुंघराले
अरुण शिखा = मुर्गा
अलक = बाल
अलि = आली, सखी, भौंरा
अहै = बिछौना
अवगाहे = स्नान किये
अवतंस = सिरका भूषण
अवदात = स्वच्छ
अवहित्थ = छिपाना
अवनि = पृथ्वी
अवरेखि = अगोर रहा, लिखित
अवरोध = रुकावट
अवली = पंक्ति, समूह
अवसान = अंत
अवासो = अवाई, उजाड़
असन = आहार
असित = काला
असूया = असहन
अश्लील = असभ्य
अस्थिरता = चंचलता
अस्वास्थ्य = बीमारी
अहि = सर्प
अहेरी = शिकारी
अंक = गोद, चिन्ह
अंगना = स्त्री
अंगराग = सुगंधित उबटन
अँगोछन = रूमाल
अंचै = पीकर, धोकर
अंत्रि = अँतड़ी
अम्ब = माता, आम
अम्बक = आंख
अम्बर = वस्त्र, आकाश
अंबु = जल
अंबुज = कमल
अंबुद = मेघ
अंशुमाली = सूर्य्य

आ

आखर = अक्षर
आगम = शास्त्र
आछत = रहते हुए
आड = बेंड़ा तिलक
आतप = धूप
आतुर = व्याकुल, उतावला
आदरस मंदिर = शीशमहल
आधि = चित्त की व्यथा
आनन = मुख
आब = जल
आबनूस = काली लकड़ी का वृक्ष
आमर्ष = क्रोध
आमलक = आंवला
आरस = आलस
आरी = तरफ
आर्द्रता = दया
आली = सखी
आले = उत्तम, गीला
आशु = जल्दी
आहार्य = भेष बदलना

इ

इन्दिरा = लक्ष्मी
इन्दीवर = कमल
इन्द्रनील = पन्ना
इन्द्रबधू = बीर बहूटी
इरम्मद = बिजली, बड़वानल

ई

ईछन = नेत्र
ईठ = इष्ट
ईषत् = थोड़ा

उ

उकसनि = इशारा
उछाह = उत्साह
उज्यारी = उजियाली, उजाला
उटज = झोपड़ी
उजास = प्रकाश
उतायल = जल्दी
उत्कर्षता = बढ़ती
उतंग = ऊंचे
उत्थित = खड़ेहोना
उदधि = समुद्र
उद्द = उद्धत
उनमाथी = मंथन करनेवाला
उन्माद = अचेतता
उनहारि = शकल
उनींद = आलस्य भरे
उनै = नम्र होकर
उपटी = छाप
उपवन = गांव के पास सुंदर वृक्ष समूह
उपहार = इनाम
उपहास = हँसी, ठट्ठा
उपालंभ = उलाहना
उमाची = पैदा हुई
उमाह = उमंग
उमेड़ो = मरोर
उड़गन = तारे
उरज = स्तन
उरोज = स्तन
उये = उदय
उशना = शुक्र
उससति = खिसकती है
उससी = ऊंची सांस लेरही
उसासी = सांस
उसीसे = तकिया
उसीरन = खस
उहांती = हरकाई

ऊ

ऊकन = निकलने लगी
ऊखन = सांटा, गन्ना
ऊजा = वेगसे
ऊरु = जांघ
ऊबि = घबराकर
ऊरध = ऊपर
ऊष्म = ताप

ऋ

ऋतुराज = बसंत

ए

एतीयै = इतनाही
एनी = मृगी
एला = इलायची

ओ

ओखे = सूखे, बहाना
ओजित = बलवान
ओदर = उदर
ओप = शोभा, चमक
ओरो = ओला

औ

औझकि = एकाएक
औधि = अवधि
औषधीश = चन्द्र

क

कच = बाल
कचराती = थोड़ी खिलती हुई
कजाकी = कतल करना, डाका मारना
कंदबिनै = मेघमाला
कदन = मारना
कदली = केले का वृक्ष
कनक = सोना, धतूरा
कन्दर्प = कामदेव
कनैखिन = आंखों की कोर से देखना
कनौड़ी = लांजित, निंदित
कमठ = कच्छप
कम्बु = शंख
कमनीय = सुन्दर
कमनैत = धनुर्धर
कमवूल = कम उमर, कोमल
करद = छुरी
करवाल = तलवार
करवीर = कनेर वृक्ष
करषि = खींचकर
करसायल = मृग
करहाट = कमल की जड़
करी = कड़ी, हाथी
कलधौत = सुवर्ण
कलानिधि = चन्द्रमा
कलाप = समूह, मोरपुच्छ
कलापिनी = मुरैली
कलापी = मोर
कलित = सुन्दर, ध्वनियुक्त
कलन = नवपल्लव
कंचनी = वेश्या
कंचुकी = चोली
कंत = पति
कंथा = गुदड़ी
कंबु = शंख
काकपत्त = जुल्फ
काकलीन = कोयल की कूक
कातर = अधीर
काती = छोटी तलवार
कादर = डरपोक, कायर
काती = छोटी तलवार
कादर = डरपोक, कायर
कानि = लज्जा
काहिल = सुस्त
कांची = कची
कांधर = कान्हर, कृष्ण
कालकूट = विष
काश्मीर = केसर
किनाने = विकाने
किलकिंचित् = संयोग समय के हाव
किंसुक = पलास के फूल
किंजल्क = केशर
कीकरति = चिल्लाती
कुज = मंगल
कुट्टमित = मिथ्या दुःख चेष्टा
कुबत = निंदा
कुवलय = नील कमल
कुबेर = धनदेवता
कुमुद = रात्रि विकासी कमल
कुरकुट = मुर्गा
कुंजर = हाथी
कुरंग = हरिण
कुलटा = कुलबोरिन
कुन्त = बरछी, भाला
कुलह = टोपी, ढक्कन
कुहू = अमावस, कोयल का शब्द
कृश = दुबला
कृष्णसार = मृग

केकी = मोर
केतु = झंडा
केलि = क्रीड़ा
केम = कदंब
कैवा = कईवार
कोक = चकहा चकई
कोकनद = लाल कमल
कोल = सुँवर
कोंछ =गोद
कौमुदी = चांदनी
कौंधा = बिजली की चमक

ख

खग्ग = खड्ग, तलवार
खवीस = भूत, प्रेत
खिडिन = बगिया
खीन = पतली
खुटी = गांठ, तह
खूंदन = विकलता
खौर = तिलक

ग

गई = सबर, गत
गरल = विष
गर्दभ = गदहा
गयंद = हाथी
गवाक्ष = खिड़की
गहन = कठिन
गहरत = मंदमंद
गहीरिन = गूढ़
गाज = वज्र
गुड्डी = पतंग
गुमर = कानाफूसी
गुरेरन = गुलेलों से
गोए = छिपाये
गौं = मौका

घ

घनसार = कपूर
घरहाँई = [illegible]फोड़नी
घरीसी भरै = मृत्यु के निकट

च

चकचूर = निष्फल
चख = आंख
चटकाली = गुरैया का समूह
चरजना = बहकाना
चरणायुध = मुरगा
चवाव = चुगली
चंचरीक = भौंरा
चंचला = बिजली
चंडकर = सूर्य
चामीकर = सुवर्ण
चारी = चुगली
चारु = सुन्दर
चालो = गौना
चेटक = नौकर, कौतुक, जादू
चोटारि = घायल
चोप = चाह
चोल = वस्त्र
चौचंद = फिसाद

छ

छई = छाये हैं
छटि = शोभा, बिजली
छत = घाव, मंडप
छद = पत्ता
छनजोति = बिजली
छपा = रात

छपाकर = चंद्र
छरा = नीवीबंधन
छराके = नीवीबंधन
छवान = एड़ी
छिति = पृथ्वी
छाम = पतला
छीवर = मोटीछींट
छीरज = स्तन
छुही = रंगी
छोभमई = व्याकुल
छेहु लेना = दांव लेना
छोहरी = छोकरी
छौना = लड़के

ज

जनकु = जानोंकि
जनेत = बरात
जनेस = राजा
जमदाढ़ें = जमधर
जरकसी = जरीके कामकी
जरफ = बरतन
जलज = मोती, कमल
जलाकन = तेज, धूप
जम्बुक = सियार
जम्बूनद = सुवर्ण
जातरूप = सुवर्ण
जातवेद = अग्नि
जाती = चमेली
जानु = घुटना
जामिनी = रात
जावक = महावर
जिह = रोदा
जीगन = जुगनू
जुगुप्सा = घिन
जुन्हाई = चांदनी
जूमि = इकट्ठाहो
जूहन = समूह
जैतवार = जीतनेवाले
जोन्ह = चांदनी
जोय, जुइया = पत्नी
जोयसी = ज्योतिषी
जोवति = देखती
जोह = देखना
ज्वै = परख
ज्योतिस्न = चांदनी रात

झ

झख = मछली
झांवत = रगड़ कर धोती है
झैल = लपटाकर
झौंर = झुंड, झंझट

ट

टुक = जरा, थोड़ा
टेव = आदत
टेसू = पलास फूल

ठ

ठगौरी = जादू, छल
ठवनि = चाल
ठिकि = ठीक, छन
ठौनि = अदा

ड

डहडहे = खिलेहुए
डाढ़ी = जली
डावरियां = लड़कियां

ढ

ढिग = पास, तरफ
ढेक = सारस

त

तकियान = उस समय
तची = आंचलगी
तटनी = नदी
तड़ाग = तालाब
तड़िता = बिजली
तनूर = चूल्हा
तनुरुह = रोम, केश
तनैनी = क्रुद्ध
तमचुर = ताम्रचूड़, मुर्गा
तमोल = पान
तमिस्रा = अंधेरीरात
तरजि = डरवा करके
तरनि = सूर्य्य, नौका
तरल = चंचल
तर्ज्जन = धमकाना
तहतही = गुन उपाय
तंड = नृत्य
तारंक = कर्णफूल
ताव = शक्ति
तामरस = कमल, तांबा, सोना
ताम्र सखा = मुर्गा
तालन = वृक्ष विशेष
तिर्य्यक = टेढ़ी
तीखन = तेज
तुका = गांसी
तुंग = ऊंचे
तुरंग = घोड़ा
तूल = रुई
तेखि = क्रुद्धित
तेह = क्रोध
तोयद = मेघ
त्रिवली = स्त्रियों के उदर की तीन ल
त्रिविध समीर = सीतल, मंद, सुग
पव
त्वचा = चमड़ा

थ

थरको = कांप उठा

द

दमामा = नगारा
दम्पति = स्त्री पुरुष
दरभ = कुश
दरीचिन = खिड़कियां
दवन = दौना
दवारे = दावानल
दसन = दांत
दम्पा = बिजली
दाघ = गरमी
दाड़िम = अनार
दाधे = जले
दादुर = मेंडक
दाय = गर्व
दामिनी = बिजली
दारक = पुत्र
दारिका = कन्या
दारुण = कठिन
द्विप = हाथी
द्वीप = टापू
दीठ = नजर
दीह = चौखट
दुकूल = वस्त्र
दुमात = सौतेली मां
दुति = प्रकाश
दुरै = छिपै
दुवन = वृक्ष, द्रुमन

दूमै = हिलता है
द्रुत = जल्दी
दोवरीन = दूसरा गलियारा
दोषा = रात
द्योतक = सूचक
द्यौस = दिवस
द्विजराज = चन्द्रमा, दांतों की पंक्ति, श्रेष्ठ ब्राह्मण

ध

धनेस = कुबेर
धानी = हल्का हरा रंग
धावन = दूत
धुंधारे = काले
धुनी = नदी
धुरवा = बादल, मेघ
धुरीन = अगुवा
धूंधरि = ऊधम
धृति = दृढ़ता
धृष्ट = ढीठ
धौरे = पास

न

नखत = नक्षत्र
नग = नगीना, पर्व्वत
नटति = नहीं करती
नभान = आसमानी
नलिन = कमल
नवनीत = मक्खन
नाक = नासिका, आकाश
नाग = हाथी, सर्प
नागर = चतुर
नाधे = संबंध
नारिकेल = नारियल
नासा = नाक, नथकिया
नाह = नाथ, स्वामी
निकर = समूह
निकाई = खूबसूरती, वाहवाह
निकेत = घर
निखोटि = निष्कपट
निगम = वेद
निगोड़ी = निकम्मी
निघर घट्यो = बेशरमी
निदाघ = ग्रीष्मऋतु
निदान = कारण
निधन = मृत्यु
निधान = घर, खजाना
निरखिनि = चितवन
निवाजिबो = पालना
निर्वेद = वैराग्य
निलय = घर
निसा = रात, इच्छा
निसीथि = आधीरात
निहोरे = वास्ते, एहसान, विन्ती
नीठ= ठान करके, अच्छा नहीं, मुश्किल से
नीप = कदंब
नीवी = कटि बंधन
नीरज = कमल
नीरद = मेघ, वेदांत
नुकता = विन्दु
नेजा = भाला
नूनो = कम
नेसुक = किंचित्, तनक
नैहर = मायका

प

पजावा = आंवा
पटकुटिका = खीमा, डेरा
पद्म = कमल

पनस = कटहर
परजंक = पलंग
परजन्य = बादल
परारे = पराया
परवी = पर्व, त्योहार
परिचारिका= दासी
परिमल = सुगंध
परिवाद = चुगली
परिहरि = छोड़कर
परिहास = ठट्ठा
परेखो = परीक्षा
पर्दनि = धोती
पवि = वज्र
पसाय = प्रसन्न कर, प्रसाद
पाकसासन = इन्द्र
पाटल = गुलाब
पांवरी = खड़ाऊं, ओढ़नी
पावस = वर्षाऋतु
पिक = कोयल
पीन = स्थूल, बड़ा
पीयूष = अमृत
पीहर = मायका
पुरंदर = इन्द्र
पुरहूत = इन्द्र
पुराकृत = पहिले किया हुआ
पुलिन = नदी तट
पंक = कीचड़
पुंडरीक = कमल
पैंडो = रास्ता
प्रगल्भ = प्रौढ़
प्रणय = स्नेह
प्रजंक = पलंग
प्रतीक्षा = बाट जोहना
प्रवाल = मूंगा
प्रमाद = भूल
प्रेयसी = प्रिया

फ

फरद = कागज
फुलिंग = चिनगारी
फुही = जलकण

ब व

बगानो = दौड़ा
बगर = सैर का स्थान
बटा = गेंद
बढ़ाये = गुलहुए, अधिक
बतास = पवन
बदरी = बेर
बनीन = वन
बनौटी रंग = केसरियारंग
बपु = शरीर
बरही = मोर
बरेजे = उत्तम
बरेतें = जोर से
बरौठे = पौरि
बलाहक = मेघ
बंजुल = बेंत का वृक्ष
बलाके = बगलों की पांति
वलि = न्योछावर होना
बसीठी = दूत
वाद = झगड़ा
वादि = व्यर्थ
वानि = स्वभाव, वाणी
वानिक = ठाठ
वापी = बावली
वारुणी = मदिरा
बिगोई = नसाई
बिजन = सूना, निर्जन

बिजना = पंखा
बिज्जु = बिजली
बितान = चंदोवा
बिदग्ध = चतुर
बिद्रुम = मूंगा
बिधु = चन्द्र
बिमाने = गर्वित
बिभाति = शोभा
बिभावरी = रात
बिरद = यश
बिराव = शब्द, शोर
बिय = दूसरा
बिलोल = चंचल
बिसासी = विश्वासघाती
बीथिन = गली
ब्रीड़ा = लज्जा
बेसर = नथ
बैसन्दर = अग्नि, बैश्वानर
बौरे = भौंरे, पागल
व्योम = आकाश
ब्रजति = जाती है

भ

भटू = सखी
भांडीर = वट वृक्षों का वन
भावते = प्यारा
भुशुंड = शुंड
भूरि = अधिक
भोंडर = अभ्रक
भेक = मेंडक
भ्राजै = शोभित है
भोगी = सर्प, भोगने वाला

म

मकरंद = पराग
मंगलामुखी = गानेवाली
मखतूल = रेशम
मघवा = इन्द्र
मज्जा = हड्डी के भीतर का गूदा
मजीठ = औषधि विशेष
मजेजदार = मजेदार
मधूकन = भंवरे
मतीर = कलींदा
मधु = शहद, चैत का महीना
मनायक = मनानेवाला
मनकु = मानोंकि
मधुहारि = मीठा बोलना
मनैल = स्वेच्छाचारी
मजाकैं = मजाक, दिल्लगी
मंजीर = पांवकी घुंघरू
मयूख = किरण
मयंक = चन्द्रमा
मरकत = पन्ना
मरगजी = मर्दित
मरजानि = भंग करने वाला
मरन्द = पुष्परस
मरीचिका = किरिण
मरूकै = मुशकिल से
मलिंद = भौंरा
मल्लिका = चमेली
मल्ली = बेला
मवासो = डेरा, मोर्चा
मसूस = गुप्त हृदय पीड़ा
महूख = शहद
मसि = स्याही
माखि = खफा होकर

मातुल = मामा
माधव = विष्णु, कृष्ण, वैसाख
माधवी = चमेली
मावस = अमावस
माहुर = विष
मार्तंड = सूर्य
मिस = बहाना
मुकुताहल = मोती
मुकुलित = अधखुली
मृगमद = कस्तूरी
मृगराज = सिंह
मृणाल = कमल की डंडी
मेचक = काला
मेदुर = सघन, चिकना
मेद = चर्बी
मैंगल = मस्त हाथी
मोट्टायित = नखरे
मौड़ी = नादान बालिका

य

यामिनी = रात
युगपत = एकही समय

र

रई = मथानी
रजक = धोबी
रद = दांत
रजत = चांदी
रजनी = रात
रजवती = ऋतुमती
रतनारी = लाल
रनित = बजताहुआ
रमक = थोड़ा, हलका
रमण = नायक
ररै = बारबार कहे
रली = मिली हुई, सनी हुई
रशना = करधनी
रसना = जीभ, रसहीन
रश्मि = किरण
रसवाद = बकवाद
रसा = पृथ्वी
रसाल = आम का वृक्ष, रसीला
रहसि = एकान्तमें
रंक = दरिद्र
रंगरली = अनुराग में मिली
रंचक = जरा
रंजित = शोभित
राका = पूर्णिमा
राग = ललाई, गान
रागे = रँगे हुए
राची = शोभित
राजी = शोभित, पंक्ति
राते = लाल
रार = तकरार
रासभ = गधा
रूरी = सुंदर
रेजे = टुकड़े
रेनी = सनी हुई
रेल = समूह
रेला = धक्का धुक्की
रेवा = नर्मदा
रोदा = धनुष की तांत
रोमराजी = रोमावली
रौन = शब्द

ल

लरजाना = लटका देना
ललन = पति, नायक
ललना = नायिका
ललाम = सुन्दर
लहना = पाना, भाग

लंक = लंका, कमर
लंगर = नटखट
लाह = लाभ
लीला = क्रीड़ा, गोदना
लुनाई = सुन्दरता
लुही = ललचाई
लोने = सुंदर, नमकीन
लोनी = सुंदर
लोम = रोम
लोयन = लोचन
लोल = चंचल
लों = तक, समान

व

वदनराग = मुख की ललाई
वरुण = जलदेवता
वारुणी = शराब
वाथ = अँकवार
वारबधू = वेश्या
वारमुखी = वेश्या
वारिज = कमल
वारैं = निछावर करैं
वासव = इन्द्र
विकृत = बिगड़े हुए
विच्छित्ति = किंचित् शृंगार
वितान = मंडप
विक्षोभ = कंप
विड़ाल = बिलाव
विपर्यय = बदल जाना
विरद = यश
विबोध = जागृत
विभावरि = रात
विस्मृति = भूलजाना

[illegible] = छोड़कर
विहत = लज्जित
वेपनादि = मटकाना
वै = उदय
वैवर्ण्य = फिकावट

श

शक्र = इन्द्र
शची = इन्द्राणी
शिखी = मोर
श्रीफल = बेल, नारियल
श्रोणित = लहू, खून

स

सचान = बाज पक्षी
सची = इन्द्राणी
सटाकेनटा = अट्ट सट्ट
सनेह = प्रीति, तेल
सफरी = मछली
समीर = पवन
सरसी = झील, शोभायुक्त
सर = बराबरी, बाण, तालाव
सरासन = धनुष
सरोट = सिकुड़न
सलिल = पानी
सविता = सूर्य
ससा = खरगोश
ससेरी = डरजाना
सहकारन = आम का वृक्ष, सुंदर
संचरन = चलना
संचालित = हिलना
संपा = बिजली
सारस = आलसी, कमल, पक्षी
सारंग = कपूर, राग, मोर, हरिण, सर्प

सारिका = मैना
सालै = दुःख देता है
सावक = बच्चे
सासा = असमंजस
सांसति = कष्ट
सिकता = वालू, चीनी
सिखंडी = मोर
सिखी = मोर
सित = सफेद
सिताव = जल्दी
सियरे = ठंडे
सिलसिले = भींगे
सीझौं = झूठा निकलूं
सीतकर = चन्द्रमा
सीने = छाती
सीमंतिनी = स्त्री
सीवें = हद सीमा
सुखमा = शोभा
सुगैया = चोली, अंगिया
सुतीते = विस्तर, गरम
सुथरे = सुंदर
सुधा = अमृत
सुमेह = घना बादल
सुरापगा = गंगा
सुरत = सहवास
सुरभी = गौ, सुगंध
सुरापी = शराब पीने वाला
सूहे = लाल
स्वेद = पसीना
सेखर = मस्तक
स्वैरिणी = कुलटा
सोनित = रुधिर
सोम = चन्द्रमा
सोध = महल
सौरभ = सुगंध
सौं = कसम सौंह
सौंतुख = प्रत्यक्ष
स्यंदन = रथ
स्यारपन = कायरता
स्वेद = पसीना

ह

हदली = मर्य्यादली
हय = घोड़ा
हरए = धीरे
हरिवासर = एकादशी
हरियारी = हरा, कृष्ण से प्रेम
हरे हरे = धीरे धीरे, हौले
हलाहल = विष
हाती = नष्ट
हिताव = धैर्य
ही = थी, हृदय
हीर = हृदय, हीरा
ह्री = लज्जा
हुतासन = अग्नि
हूक = दरद, शूल
हूंकन = चलने लगी
हूति = बुलौवा
हेम = सुवर्ण
हेला = झकझोर, खेल
हेलि = मिलकर
हेली = खेलने वाली, चालाक
होतब = होनहार
हौं = मैं, हूं

निवेदन

यदि अवकाश मिला तो उद्दीपन विभाव तथा संयोग और विप्रलम्भ शृंगारादि का भी अलग ग्रन्थ लिखने का प्रयत्न किया जायगा।

इत्यलम्

विनीत

जगन्नाथप्रसाद-'भानु'।